आत्मधर्म

अन्तिम दर्शन

स्वर्गीय पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी

आत्मधर्म [४२६]

[हिन्दी, गुजराती, मराठी, तामिल तथा कन्नड़ — इन पाँच भाषाओं में प्रकाशित
जैन समाज का सर्वाधिक बिक्रीवाला आध्यात्मिक मासिक]

संपादक :
डॉ० हुकमचन्द भारिल्ल

प्रबंध संपादक : **अखिल बंसल**

कार्यालय :
श्री टोडरमल स्मारक भवन
ए-४, बापूनगर, जयपुर ३०२००४

प्रकाशक :
श्री दिगम्बर जैन स्वाध्यायमंदिर ट्रस्ट
सोनगढ़ (भावनगर-गुजरात)

शुल्क :
आजीवन : १०१ रुपये
वार्षिक : ६ रुपये
एक प्रति : ५० पैसे

मुद्रक :
सोहनलाल जैन, जयपुर प्रिण्टर्स, जयपुर

कहाँ / क्या

१ पूज्य गुरुदेवश्री..... ?
२ संपादकीय :
हा गुरुदेव! अब कौन..... ?
३ वे जीव कैसे हो सकते हैं ?
[समयसार प्रवचन]
४ मनोगुप्ति, वचनगुप्ति, कायगुप्ति
[नियमसार प्रवचन]
५ धर्मी को आत्मा के सिवा.....
६ द्रव्यसंग्रह प्रवचन
७ श्रद्धांजलियाँ

पूज्य गुरुदेवश्री के आकस्मिक देहावसान की सूचना प्राप्त होने तक इस अंक के बीच के १६ पेज छप चुके थे। अत: शेष पृष्ठों में ही पूज्य स्वामीजी संबंधी समाचार दिये जा सके हैं। अगला अंक पूर्णत: श्रद्धांजलि अंक के रूप में ही रहेगा।

— संपादक

आ त्म ध र्म

शाश्वत सुख का, आत्म शान्ति का, प्रगट करे जो मर्म।
समयसार का सार, सभी को प्रिय, यह आतम धर्म॥

वर्ष : ३६ [४२६] अंक : ६

पूज्य गुरुदेव श्री कानजी स्वामी का देहावसान

मुमुक्षु जगत का अनभ्र वज्रपात

अंतिम दर्शन के लिये लाखों की भीड़ उमड़ी

पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के देहावसान से अध्यात्म जगत का एक दैदीप्यमान सूर्य अस्त हो गया है। उनके इस अप्रत्याशित निधन से मुमुक्षु जगत पर एक अनभ्र वज्रपात हुआ है। समाचार सुनकर समस्त जैन समाज में शोक का वातावरण छा गया।

बम्बई और सोनगढ़ में तथा बम्बई से सोनगढ़ जाते हुए मार्ग में—बड़ौदा, अहमदाबाद, पालेज एवं उनकी जन्मभूमि उमराला में लाखों लोगों ने समाधिस्थ मुद्रा में विराजमान उनके अंतिम दर्शन किये।

२८ नवम्बर, १९८० को शाम के सात बजकर दस मिनिट पर आत्मनिमग्न दशा में उन्होंने देह का परित्याग किया। संपूर्ण बम्बई नगर में यह समाचार बिजली की भाँति तत्काल प्रसारित हो गया। समाचार मिलते ही लोग उनके अंतिम दर्शनार्थ उमड़ पड़े। नीलांबर के विशाल मैदान में भीड़ को नियंत्रित करना असंभव हो गया।

बम्बई से देश के कौने-कौने में समाचार देने के लिये टेलीफोन खटकने लगे। कुछ ही मिनटों में यह समाचार सारे देश में फैल गया और उनके दर्शनार्थ लोग सोनगढ़ की ओर दौड़ पड़े। हजारों लोगों की लंबी कतारें थीं, पर न हवाई जहाजों के टिकिट मिल पा रहे थे, और न

रेलों में स्थान था; अतः लोग प्राइवेट बसें, टैक्सियाँ आदि लेकर भागे। बम्बई से भावनगर के लिये चार्टर प्लेन किया गया। इसप्रकार २४ घंटों के भीतर सोनगढ़ में लगभग बीस हजार की भीड़ इकट्ठी हो गई। आस-पास के गाँवों से भी बहुत लोग आये थे। लगभग सौ प्राइवेट बसें तथा इतनी ही कारें सोनगढ़ में पहुँची थीं। हजारों लोग रेलों, मोटरों और अन्य साधनों से आये थे। ग्रामवासियों ने तीन दिन तक बाजार बंद रखा और बाहर से आये अतिथियों के आवास आदि की व्यवस्था में पूरा-पूरा सहयोग दिया।

गुरुदेवश्री का अंतिम संस्कार सोनगढ़ में दिनांक ३०-११-८० रविवार को सायं ३ बजे होना था। १ बजे से विशाल शवयात्रा निकली जो अनियंत्रित, अगणित समुदाय के कारण ४ बजे यथास्थान पहुँची। भारतवर्षीय दिगम्बर जैन विद्वद् परिषद् के अध्यक्ष पंडित नाथूलालजी संहितासूरि ने शास्त्रोक्त विधि से अंतिम संस्कार कराया। इस अवसर पर लोगों के आँसू रोके नहीं रुक रहे थे।

तारों तथा संवेदना-पत्रों का तांता लग गया। गुजरात के प्रमुख दैनिक प्रवासी, जन्मभूमि, फूलछाप, बम्बई समाचार, सौराष्ट्र समाचार, जनसत्ता आदि; मध्यप्रदेश के नई दुनिया आदि; उत्तरप्रदेश के अमर उजाला आदि; राजस्थान के राजस्थान पत्रिका, राष्ट्रदूत, समाचार जगत आदि तथा अखिल भारतीय स्तर के नवभारत टाइम्स, हिन्दुस्तान, संध्या टाइम्स आदि तथा और भी अनेक दैनिक तथा साप्ताहिक अखबारों ने इस समाचार को गुरुदेवश्री के चित्रों के साथ मुखपृष्ठ पर विस्तार से छापा। इस अवसर पर उनकी जीवनी भी अनेक अखबारों ने प्रकाशित की। रोडियो और टेलीविजन पर भी अनेक केंद्रों से उनके निधन के समाचार प्रसारित हुए।

दाह-संस्कार होने के बाद सोनगढ़ में ही बीस हजार से भी अधिक जनता की उपस्थिति में एक विशाल शोक-सभा आयोजित की गई जिसमें सर्वप्रथम **विद्वद् परिषद् के अध्यक्ष पंडित नाथूलालजी शास्त्री संहितासूरि ने विद्वद् परिषद्, मालवा प्रांतिक सभा, महावीर ट्रस्ट, सन्मति वाणी तथा सर हुकमचंद ट्रस्ट की ओर से संचालित समस्त पारिमार्थिक संस्थाओं आदि की ओर से हार्दिक श्रद्धांजलि व्यक्त करते हुए कहा :—**

''मैं ३५ वर्ष से पूज्य गुरुदेव के संपर्क में हूँ। ऐसा अपूर्व पराक्रमशाली व्यक्तित्व हमने नहीं देखा और न सुना। आपके प्रभावशाली व्यक्तित्व की छाप तो सारे समाज में ही दृष्टिगोचर

हो रही है। सैंकड़ों, हजारों की नहीं; लाखों व्यक्ति आपके तत्त्व से प्रभावित हैं। जिसप्रकार तीर्थंकरत्व की भावना से ओतप्रोत होने पर समस्त जगत के कल्याण की भावना होती है; उसीप्रकार आपको भी समस्त जगत का हित कैसे हो यह भावना बहुत प्रबल थी। आपने समयसारादिक दिगम्बर ग्रंथों का ऐसा प्रचार-प्रसार किया कि आज सारे देश में जगह-जगह पर, गाँव-गाँव में कुन्दकुन्दाचार्य द्वारा प्रणीत ग्रंथों का स्वाध्याय किया जाता है। यहाँ तक कि विदेश में भी इस दिगम्बर धर्म का डंका आपने बजाया है।

हम यद्यपि विद्वान पंडित हैं, तथापि हम समयसारादि ग्रंथ के मर्म को नहीं जानते थे। परंतु जब स्वामीजी के प्रवचन सुने तब हमें वास्तव में यह ज्ञान हुआ कि निश्चयव्यवहार क्या चीज़ है ? बोलना अलग बात है; पढ़ाना अलग बात है, परंतु उसके रहस्य को समझना अलग बात है। मैं और मेरे सरीखे अनेकों विद्वानों ने भी जब इन ग्रंथों का निष्पक्ष दृष्टि से अध्ययन किया तब इन ग्रंथों के रहस्य को जाना है।

सोनगढ़ मुमुक्षु मंडल की ओर से विद्वद्वर्य पंडित हिम्मतभाई, सोनगढ़ ने अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहा :-

'जिस दिन की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी, उस दिन को हम अभाग्यवानों को देखना पड़ा है।.....अब भारतवर्ष के समस्त मुमुक्षु किस उद्देश्य से यहाँ आवेंगे ? मात्र स्मृति करने के लिये कि गुरुदेव यहाँ पर रहते थे, यह सोचकर भले ही आवें, परंतु भव का अभाव करनेवाली वाणी अब कहाँ सुनने को मिलेगी ?'

सुप्रसिद्ध आध्यात्मिक प्रवचनकार पंडित लालचंदभाई, राजकोट ने अपनी भावना व्यक्त करते हुए कहा :-

'पूज्य गुरुदेवश्री तो चले गये हैं, परंतु शुद्धात्मतत्त्व हमें बता गये हैं। उसके आश्रय से ही मोक्षमार्ग तथा मोक्ष की प्राप्ति होती है, अन्य कोई उपाय नहीं है, ऐसी सचोट वाणी के द्वारा वस्तुतत्त्व की बात बतायी है।....

गुरुदेवश्री ने हमें बताया कि आत्मा का स्वभाव अकर्ता है—यह जैनदर्शन की उत्कृष्टता है, पराकाष्ठा है। क्रमबद्धपर्याय द्वारा भी आत्मा का अकर्तापना सिद्ध किया है।'

विद्वद्वर्य पंडित खीमचंदभाई शेठ, सोनगढ़ ने अपने उद्‌गार व्यक्त करते हुए कहा :-

'जिसप्रकार कुन्दकुन्दाचार्य के बारे में कहने में आया है कि यदि कुन्दकुन्दाचार्य

सीमंधर स्वामी से प्राप्त दिव्यज्ञान द्वारा हमें बोध नहीं देते तो हम सच्चे मार्ग को कैसे जानते ? उसीप्रकार यदि यह मुक्तिदूत परमागम के हृदय में बैठकर अंतर में से उसका रहस्य नहीं बतलाते तो हम कैसे परमागम का रहस्य समझ पाते तथा वर्तमान में भी उनके बिना हमारा आधार क्या है ?'

डॉ० हुकमचंदजी भारिल्ल, जयपुर ने राजस्थान की जैन समाज, पंडित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, भारतवर्षीय वी० वि० पाठशाला समिति, वी० वि० विद्यापीठ परीक्षाबोर्ड तथा टोडरमल दि० जैन सिद्धांत महाविद्यालय परिवार की ओर से श्रद्धासुमन अर्पित करते हुए अपनी भावना निम्न शब्दों में व्यक्त की :-

काल ने हम पर यहाँ तक प्रहार किया कि कुछ दिन पूर्व हमसे पूज्य गुरुदेवश्री की वाणी छीनी तथा अब दर्शन भी छीन लिये; परंतु अब किसी की ताकत नहीं है कि उनकी भक्ति-मूर्ति जो हमारे सबके हृदय में बस गयी है, उसे छीन लेवे अर्थात् उनके बताये तत्त्व को हमसे कोई नहीं छीन सकता।

जिसप्रकार धनतेरस के दिन भगवान महावीर की अंतिम दिव्यध्वनि खिरी थी; उसीप्रकार धन्य थी वह धनतेरस जिस दिन हमें पूज्य गुरुदेवश्री का भी अंतिम प्रवचन सुनने को मिला था। उसके पश्चात् हमें उनका प्रवचन सुनने को नहीं मिला।

जिसप्रकार लौकिक सूर्य जब डूब जाता है, तब हम हार नहीं मानते और रोने भी नहीं बैठते, चुप होकर भी नहीं बैठते, बल्कि जिसमें जितनी हैसियत होती है, उतना प्रकाश अपने घर में करते हैं। अर्थात् कोई ट्यूबलाइट जलाता है, कोई बल्ब जलाता है, किसी के पास कुछ नहीं हो तो एक दीपक या मोमबत्ती तो जलाता ही है; और इसप्रकार बारह घंटे की अंधियारी रात्रि को दूर करते हैं, फिर सुबह सूर्य जगमगाता है। उसीप्रकार गुरुदेवरूपी यह आध्यात्मिक सूर्य अस्त हो गया है। तथापि हमें हाथ पर हाथ धरकर बैठने की आवश्यकता नहीं है, या रोने-धोने की भी आवश्यकता नहीं है। अब हमें अपने-अपने घर में दीपक जलाने की आवश्यकता है। जिसने जितना गुरुदेवश्री से पाया हो उसका ही घोलन और जिनवाणी का अध्ययन-मनन करना चाहिये और अध्यात्म का प्रकाश कायम रखना चाहिए।

यद्यपि यह बात सत्य है कि गुरुदेवश्री सरीखा कार्य हम नहीं कर सकते, फिर भी हमें काम से मुख नहीं मोड़ना है। गुरुदेवश्री को तो अकेला समयसार मिला था, हमें तो उनके

१९-१९ बार के प्रवचन भी मिले हैं। पूज्य गुरुदेव ने यहाँ ४५ वर्ष तक हमें सुनाया। अब हमने ४५ वर्ष में जो उनसे सुना है उसे रोथें (जुगाली करें), चबाऐं; दिन-रात उसी का घोलन करें, उसी का मंथन तथा चिंतन करें।

पूज्य गुरुदेवश्री ने हमें अध्यात्म तत्त्व ही नहीं दिया, बल्कि उन्होंने सारे देश तथा समाज में हम लोगों को एक सूत्र में संगठित भी किया है। उन्होंने सामाजिक क्रांति भी की है। जातिवाद, भाषावाद, प्रांतवाद आदि सभी वादों को उन्होंने तोड़ा है। जैन समाज के जितने भेद थे, उनको तोड़ा है। श्वेताम्बर, दिगम्बर को एक किया है। खंडेलवाल, पोरवाल, परवार आदि समस्त जातिगत भेदों को तोड़कर सबको एक साथ बैठाया है। जैसे तीर्थंकर के समवसरण में शेर और हिरण एक घाट पर पानी पीते हैं; उसीप्रकार हम भी जातिगत तथा भाषागत भेदभाव को भूलकर एकमात्र मुमुक्षु की हैसियत से एक साथ बैठे, एक हो गये। इसप्रकार उन्होंने जातिगत भेदभावों को मिटाने में भी बहुत बड़ा योगदान दिया है।

पूज्य गुरुदेवश्री के कारण हम एक सूत्र में बंधे थे, हमारा मिलना भी निश्चित था। पंचकल्याणकों, जन्मजयंती उत्सव, शिविर आदि में हम सब एकत्रित होते थे, परंतु उनका सूत्र टूट चुका है। अत: अब हमें खुद जुड़े रहना है। अब हमें जोड़नेवाला कोई नहीं है। अब हमें खुद इस बंधन को कायम रखना है। यदि हम इसीप्रकार जुड़े रहकर समाज में कार्य करते रहेंगे तो गुरुदेवश्री के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि समर्पित कर सकेंगे।'

आध्यात्मिक प्रवचनकार पंडित बाबूभाई मेहता, फतेपुर ने श्री कुन्दकुन्द कहान तीर्थ सुरक्षा ट्रस्ट एवं गुजरात जैन समाज की ओर से श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए निम्न भावना व्यक्त की—

'पूज्य गुरुदेवश्री इस पंचम काल की आश्चर्यकारी वस्तु थे। उन्होंने इस पंचम काल में हमें बहुत माल दिया है। निश्चय तो गुरुदेव ने बताया ही है, परंतु व्यवहार भी गुरुदेवश्री ने ही बताया है। दया, दान आदि की क्रिया भी हमें गुरुदेव ने सिखायी और इसमें धर्म नहीं यह भी गुरुदेव ने बताया।

गुरुदेवश्री रूपी सूर्य तो अस्त हो गया परंतु उनके जाने के बाद भी इस सोनगढ़ तीर्थधाम में सूनापन न रहे, अत: यहाँ दैनिक प्रवचनादि के कार्यक्रम अवश्य होना चाहिए।....

गुरुदेव के जाने के बाद भी हम ऐसा कर बतायें कि समस्त सोनगढ़ में, यहाँ की दीवार-

दीवार में तथा कण-कण में उस तत्त्व की झंकार गूंजती रहे।'

श्री नेमीचंदजी पाटनी, आगरा ने उत्तरप्रदेश जैन समाज एवं आगरा मुमुक्षु मंडल की ओर से श्रद्धांजलि व्यक्त करते हुए कहा :—

'पूज्य गुरुदेव हमारे धर्मपिता थे, उनके जाने पर उनके द्वारा किये गये तत्त्व को हम पुत्र की भाँति सम्हालें तथा अपने कर्तव्य का पालन करें। उनकी पवित्रता और पुण्य की महिमा का क्या कहना? वह जो हमें दे गये हैं, हम उसे बढ़ा तो सकते ही नहीं हैं; परंतु यदि हम उसे यथास्थित ही बनाये रखें तो भी बहुत बड़ा कार्य होगा।'

सेठ श्री भगवानदासजी, सागर ने अपनी भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहा:—

'हम पूज्य गुरुदेवश्री के समागम में हमेशा बने रहें और सिद्ध अवस्था प्राप्त करने शीघ्र उनके पास पहुँच जावें। पूज्य गुरुदेव के पुण्य-प्रताप से जो तत्त्वप्रचार-प्रसार हुआ है वह प्रशंसनीय है।'

वाणीभूषण पंडित ज्ञानचंदजी, विदिशा ने मध्यप्रदेश जैन समाज तथा विदिशा मुमुक्षु मंडल की ओर से श्रद्धांजलि व्यक्त करते हुए कहा :—

'पूज्य गुरुदेवश्री के वियोग ने हमें इस संसार की नश्वरता का तथा इस आत्मा की अविनश्वरता का अनुभव कराया है। वे वर्तमान में स्वर्ग में विराजमान नहीं हैं, बल्कि वे तो अभी भी आत्मा में ही विराजमान हैं।.....

आज हमें यह प्रतिज्ञा करनी चाहिए कि गुरुदेवश्री ने जो सत्य सनातन मार्ग का सारे विश्व में ध्वज फहराया है और हम सभी मुमुक्षुओं के हाथ में दिया है, वह कभी भी झुकने न पाये।'

श्री जयचंदजी लोहाड़े, हैदराबाद ने आंध्रप्रदेश जैन समाज, हैदराबाद महासमिति तथा भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी की ओर से श्रद्धांजलि समर्पित करते हुए कहा:—

'पूज्य स्वामीजी ने जो तत्त्व दिया है, वह अपूर्व है। उन्होंने जैनधर्म का भी वास्तविक स्वरूप हम जैनियों को बताया है। मैं स्वयं यह मानता था कि पुण्य कर दिया, बस सब कुछ हो गया और इससे ही हमें मोक्ष मिल जायेगा। परंतु स्वामीजी के संपर्क में आये तो हमें पता चला

कि पुण्यवान और पापी दोनों समानरूप से संसार के अधिकारी हैं और दोनों को मोक्ष प्राप्त नहीं होगा। पुण्य और पाप दोनों भावों को जब हम छोड़ेंगे और आत्मज्ञान प्राप्त करेंगे तब हमें मोक्ष की प्राप्ति होगी।

मैं समझता हूँ कि स्वामीजी के संपर्क में आने से हमें यह बात प्राप्त हुई है और यदि हम उनके संपर्क में नहीं आते तो शायद हमें यह बात कभी भी नहीं मिलती। मैं समझता हूँ कि मेरे समान बहुत से लोगों के ऊपर स्वामीजी का महान उपकार है।

स्वामीजी का ही यह उपकार है कि आज हमारे पास दो करोड़ रुपये का ध्रुवफंड इकट्ठा हो गया है। यह दिगम्बर समाज के लिये गौरव की बात है कि जिसके बल से हम समाज में तत्त्वज्ञान की ज्योति जला सकते हैं तथा समाज का जीवन धर्ममय बना सकते हैं तथा अपने तीर्थों की रक्षा कर सकते हैं।'

ब्रह्मचारी चन्दूभाई जाबोलिया ने पूज्य गुरुदेवश्री की अंतिम समय की आध्यात्मिक, मानसिक व शारीरिक स्थिति पर प्रकाश डालते हुये उनको भावभीनी श्रद्धांजलि समर्पित की।

इनके अतिरिक्त अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन की ओर से श्री अभयकुमारजी ने, तथा प्रो० जमनालालजी इंदौर, सेठ हीरालालजी काला भावनगर, ब्रह्मचारी हरिभाई सोनगढ़, पंडित सेठ हीराभाई बम्बई, ब्रह्मचारी आशाबैन एवं ब्रह्मचारी पुष्पाबेन सोनगढ़ ने भी अपनी श्रद्धांजलियाँ व्यक्त कीं।

सोनगढ़ ग्राम में भी पूज्य गुरुदेवश्री के शोक में ३ दिन तक बाजार बंद रखा गया तथा सभी नागरिकों की ओर से शोक-सभा हुई, जिसमें उच्च अधिकारियों एवं प्रमुख नागरिकों ने भावभीनी श्रद्धांजलियाँ अर्पित कीं। ग्रामपंचायत, आर्यसमाज गुरुकुल, शासकीय कन्या विद्यालय, चारित्र आश्रम, कारीगर संघ एवं चिकित्सालय आदि विभिन्न संस्थाओं ने भी शोक-सभायें आयोजित कर पूज्य गुरुदेवश्री के प्रति श्रद्धांजलियाँ अर्पित कीं।

संपादकीय

हा गुरुदेव! अब कौन.....?

हे गुरुदेव! आपके इस आकस्मिक महाप्रयाण से लाखों आत्मार्थियों के हृदय व्याकुल हो उठे हैं। यह जानते हुए भी कि जो कुछ होना था सो हो चुका—इस तथ्य को, पर्यायगत सत्य को स्वीकार करने के लिये हृदय तैयार नहीं है। आपने हमें आध्यात्मिक गूढ़ रहस्यों के साथ-साथ यह भी तो समझाया था कि कोई किसी को समझा नहीं सकता। समझाने के अभिमान से दग्ध वक्ता तो बहुत मिल जावेंगे, पर आत्मा समझ तो सकता है, समझा नहीं सकता; क्योंकि समझना उसका स्वभावगत धर्म है—यह समझानेवाला अब कहाँ मिलेगा?

आपके अभाव में आज हम सब अनाथ हो गये हैं। हजारों आत्मार्थी वर्ष भर यह आशा लगाये बैठे रहते थे कि श्रावण मास आयेगा, सोनगढ़ में शिविर लगेगा, हम वहाँ जायेंगे, और गुरुदेवश्री की पुरुषार्थप्रेरक दिव्यवाणी सुनेंगे। पर..... ?

अब इस आर्थिक युग में धन को धूल कौन कहेगा? कौन गायेगा त्रिकाली आत्मा के गीत? पुण्य के गीत गानेवाले तो गली-गली में मिल जावेंगे, पर धर्म का सच्चा स्वरूप डंके की चोट अब कौन बतावेगा? अब कौन लगावेगा आत्मा... आत्मा... आत्मा की पुकार? अब कौन समझायेगा समयसार का मर्म और कौन बतायेगा आत्मा का धर्म?

अब सोनगढ़ लोग किसके दर्शन करने, प्रवचन सुनने आवेंगे? हाँ, जिनमंदिर में विराजमान सीमंधर परमात्मा के, परमागम मंदिर में विराजमान महावीर भगवान के, संगमरमर के पाटियों पर उत्कीर्ण पंच-परमागमों के, समवसरण मंदिर के, मानस्तंभ के दर्शन करने तो लोग अवश्य आवेंगे। आवेंगे तो अवश्य, पर तभी जबकि गिरनार या पालीताना की यात्रा पर जायेंगे; आवेंगे—पर रुकेंगे नहीं, क्योंकि आपके चले जाने से उन्हें रोकनेवाला नहीं रहा। आपकी वाणी का आकर्षण ही तो उन्हें रोकता था, जब वह ही नहीं रहा तो क्या आकर्षण रहा लोगों के रुकने का?

श्रावण में यात्रा तो होती नहीं, श्रावण में तो लोग आपके आकर्षण से ही आते थे। अब वे कहाँ जायेंगे? उनका आश्रयदाता चला गया, अब वे किसका आश्रय पावेंगे?

जब प्रातः ८ और सायंकाल ३ बजेंगे, तब हम किसकी दिव्य-देशना सुनने दौड़े जावेंगे और संध्या के ७ बजे अपनी शंकाओं का समाधान किससे पावेंगे ? ये तीनों समय क्या अब हमें काटने नहीं दौड़ेंगे ?

विभिन्न प्रांतों के, विभिन्न जातियों के, विभिन्न भाषा-भाषी लोग आपके माध्यम से प्रांतीयता, जातीयता और भाषावाद के बंधनों को तोड़कर एक हो गये हैं। वे सब आपके माध्यम से जुड़े थे, जुड़े हैं; पर अब किस माध्यम से जुड़े रहेंगे ? तोड़नेवाले तो पग-पग पर मिलेंगे, पर जोड़नेवाला कहाँ मिलेगा ? अब कैसे जुड़ेंगे, कैसे जुड़े रहेंगे ?—यह प्रश्न भी हमारे सामने मुँह बाए खड़ा है ?

अब कौन देगा हमें मार्गदर्शन, कौन बँधावेगा धीरज ?

आपने लाखों आत्मार्थियों को घड़े जैसा गढ़ा है। जिसप्रकार कुम्हार कच्ची मिट्टी से घड़े को गढ़ता है, उसीप्रकार आपने हमें गढ़ा है। कुम्हार घड़े को गढ़ते समय ऊपर से धीमी-धीमी थाप मारता है तो अंदर से हाथ का सहारा भी दिये रहता है, तब बनता है घड़ा। इसीप्रकार भटकते हुए आत्मार्थी को आपकी मीठी फटकार और अंदर से दिया गया सहारा न तो उसे विचलित होने देता था और न प्रमादी ही। धनिकों को अभिमान न हो जाये—इस भावना से धन को धूल बतानेवाली फटकार लाखों लोगों ने आपके मुख से सुनी है तथा वह भटक न जाये इस भावना से की जानेवाली मृदुल अनुशंसा से भी सब परिचित हैं। क्षयोपशम ज्ञान के अभिमान में भी कोई रुक न जाये—तदर्थ उसकी असलियत से भी अब कौन परिचित करायेगा ? तत्त्वप्रचार की दिशा में किये गये प्रयत्नों को भी अब कौन सराहेगा, कौन पीठ थपथपायेगा; मीन-मेख निकालनेवाले तो बहुत मिलेंगे, पर सन्मार्ग दिखाकर प्रोत्साहित कौन करेगा ?

हजारों गालियाँ देनेवाले विरोधियों के प्रति भी अब यह शब्द कौन कहेगा कि 'भाई ! वह भी तो भगवान हैं, पर्याय में भूल है तो क्या हुआ, वह तो निकल जानेवाली है।' अब यह प्रेरणा कौन देगा कि—'आलोचना करनेवालों की ओर नहीं, अपनी ओर देखो।'

अब किसकी दिनचर्या को देखकर लोग अपनी घड़ियाँ मिलायेंगे ? अब हम लोग किससे निश्चय की महिमा सुनेंगे और किसके व्यवहार को अपना आदर्श बनायेंगे।

अब कौन गायेगा निरंतर आत्मा के गीत; कौन पहुँचाएगा अत्यल्प मूल्य में जिनवाणी घर-घर ? अब कौन..... ?

मेरे प्रिय आत्मार्थी बन्धुओ!

सूरज डूब गया। पर अब क्या हो सकता है ? वह तो डूब ही गया। अंधकार, घना अंधकार बढ़ता जा रहा है, वह तो बढ़ता ही जायेगा; पर हम सब अब भी क्यों सो रहे हैं, क्यों रो रहे हैं ? यह सोने का समय नहीं, यह रोने का भी समय नहीं है।

जागो, उठो ! इस घने अंधकार को दूर करने के लिये घर-घर में दीपक जलाओ, मसालें जलाकर निकल पड़ो और गलियों का, चौराहों का अंधकार दूर कर दो। पूज्य स्वामीजी से जो कुछ पाया है, उसे जन-जन तक पहुँचाने का महान उत्तरदायित्व आपके कंधों पर है। यह रोने का, सोने का, लड़ने का, झगड़ने का, उदासीन होकर घर बैठ जाने का समय नहीं है।

यह तो दुनिया की रीति है कि जब सूर्य अस्त हो जाता है, तो लोग घरों में दीपक जलाते ही हैं। गलियों और चौराहों पर भी समुचित प्रकाश की व्यवस्था की जाती है। क्या तुम इस जग-रीत को भी न निभा सकोगे ?

ध्यान रखो, यदि तुम इस सामान्य जग-रीत का भी निर्वाह न कर सके तो इतिहास तुम्हें क्षमा नहीं करेगा। आज तुम्हारे कंधों पर ऐतिहासिक उत्तरदायित्व है; जो पाया है, उसे दूसरों तक पहुँचाने का; जो सीखा है, उसे जीवन में उतारने का।

औरों के समान तुम भी दो आँसू बहाकर, दो शब्द श्रद्धांजलि के समर्पित कर अपने कर्तव्य की इतिश्री मत समझ लेना।

नहीं, नहीं; ऐसा नहीं होगा। हम सब मिलकर पूज्य गुरुदेवश्री द्वारा आरंभ किये गये इस मिशन को आगे बढ़ायेंगे। इस भावना और संकल्प के साथ—

— (डॉ०) हुकमचंद भारिल्ल

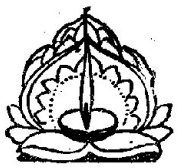

वे जीव कैसे हो सकते हैं ?

परमपूज्य आचार्य कुन्दकुन्द के सर्वोत्तम ग्रंथराज 'समयसार' की चवालीसवीं गाथा पर हुए पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के प्रवचनों का सार यहाँ दिया जा रहा है।

[गतांक से आगे]

(४) अब चौथे बोल में चैतन्यस्वभावी जीव को शरीरादि नोकर्म से भिन्न सिद्ध करते हैं।

नई-पुरानी अवस्थादिक के भेद से प्रवर्तमान नोकर्म भी जीव नहीं है, क्योंकि शरीर से भिन्न चैतन्यस्वभावरूप जीव भेदज्ञानियों के द्वारा स्वयं उपलभ्यमान है अर्थात् वे उसका प्रत्यक्ष अनुभव करते हैं।

शरीर की प्रतिक्षण होनेवाली अवस्था को अज्ञानी अपनी मानता है, जबकि वह जड़ है। आत्मा तीन लोक और तीन काल में भी उसका कर्ता नहीं है, किंतु अज्ञानी जीव अनादि काल से अपनी गलत मान्यता के द्वारा पर का कर्तृत्व मान रहे हैं। जगत के जीवों ने यह बात आज तक सुनी नहीं, और यदि सुनी भी हो तो समझी नहीं, और समझी भी तो श्रद्धा नहीं की। वास्तव में तो यथार्थ श्रद्धान के बिना सुनना, समझना भी वास्तविक नहीं है। वास्तविक सुनना-समझना तो तब कहलाये, जब यथार्थ श्रद्धान होकर आत्मा का अनुभव होवे।

अज्ञानी जीव मानता है कि अनेक प्रकार से जन्म-मरण करता हुआ शरीर ही आत्मा है तथा जन्म से लेकर मरण तक जितनी भी क्रियायें होती हैं, उन सबको जीव की मानता है। वह मानता है कि पौष्टिक आहार को ग्रहण करनेवाला अधिक काल तक जीता है, परंतु उसकी यह मान्यता सत्य नहीं है, क्योंकि आत्मा ज्ञानस्वभावी है, शरीर जड़स्वभावी है; अतः जड़स्वभावी शरीर ज्ञानस्वभावी आत्मा कैसे बन सकता है ?

ज्ञानी जीव भी जब आत्मा का अनुभव करते हैं तो उन्हें जड़स्वभावी शरीर अनुभव में नहीं आता, बल्कि चैतन्यस्वभावी जीवतत्त्व अनुभव में आता है। सर्वज्ञदेव का भी आगम-वचन यही है कि चैतन्यस्वभावी आत्मा नई-पुरानी अवस्था में प्रवर्तमान शरीर से अत्यंत पृथक् है।

शंका - शास्त्र में कथन आता है कि जब तक शरीर में रोग या बुढ़ापा न आ जावे तब तक अपना हित कर लेना चाहिये अर्थात् धर्म कर लेना चाहिये, अत: शरीराश्रित धर्म तो है न ?

समाधान - नहीं ! शास्त्र में अपना हित जल्द से जल्द कर लेने के अर्थ में यह कथन आता है। वहाँ उसका अर्थ यह नहीं है कि शरीर या इंद्रियों के पुष्ट रहने पर धर्म होता है। यदि शरीर के पुष्ट होने के कारण धर्म होवे तो जिन-जिन का शरीर पुष्ट है, उन सभी को धर्म हो जाना चाहिये, परंतु ऐसा नहीं देखा जाता। अत: शरीर के पुष्ट होने से धर्म का संबंध नहीं है। धर्म तो आत्मा का परिणाम है। जो आत्मा के परिणाम को चैतन्यस्वभावी आत्मा में लगाते हैं, उन्हें धर्म होता है। वास्तव में जो यह मानते हैं कि शरीर के पुष्ट होने पर ही धर्म होता है, वे शरीर को ही आत्मा मानते हैं, परंतु यह ठीक नहीं, क्योंकि ज्ञानी जीवों को शरीर की नई-पुरानी अवस्था से भिन्न आत्मा अनुभव में आता है।

(५) पाँचवें बोल में शुभाशुभरूप रागादिभावों से भी पृथक् आत्मा की बात करते हैं।

समस्त जगत को पुण्य-पापरूप से व्याप्त करता हुआ कर्मविपाक भी जीव नहीं है, क्योंकि शुभाशुभ भाव से पृथक् चैतन्यस्वभावरूप जीव भेदज्ञानियों के द्वारा स्वयं उपलभ्यमान है अर्थात् वे इसका प्रत्यक्ष अनुभव करते हैं।

सारे लोक में सिद्धों को छोड़कर बाकी सभी जीव पुण्य-पापरूप कर्मप्रकृतियों से संयुक्त हैं। सभी जीव पुण्य या पाप किसी न किसी कर्म को भोगते हैं-इसलिए अज्ञानी को यह भ्रम हो जाता है कि पुण्य-पापरूप से व्याप्त करता हुआ कर्मविपाक ही जीव है। परंतु यहाँ आचार्य कहते हैं कि कर्मविपाक भी जीव नहीं है, क्योंकि शुभाशुभ भावों के निमित्त से पुण्य-पापरूप कर्म बँधते हैं। जब शुभाशुभ भाव ही आत्मा से पृथक् हैं तब उनके निमित्त से बँधनेवाले पुण्य-पापरूप कर्मविपाक जीव कैसे हो सकते हैं ?

यहाँ प्रश्न है कि शुभाशुभ भाव आत्मा से पृथक् कैस हैं—तो आचार्य उत्तर देते हैं कि भेदज्ञानी जीव जब आत्मा का अनुभव करते हैं तब शुभाशुभ भाव अनुभव में नहीं आते; शुभाशुभ भाव से भिन्न चैतन्यस्वभावरूप जीव ही अनुभव में आता है।

चार गतियाँ, पाँच इन्द्रियाँ, आदि समस्त पुण्य-पापरूप कर्मविपाक जीव नहीं हैं। चैतन्यस्वभावी आत्मा ही मात्र जीव है। अन्य कुछ भी जीव नहीं है।

आत्मा की पर्याय में शुभाशुभ परिणाम होते हैं, परंतु वे कर्म के उदय में होने के कारण

कर्म के फल हैं। शुभाशुभ परिणाम आत्मा में उत्पन्न होने मात्र से आत्मा नहीं हैं। जिसप्रकार आम के वृक्ष के ऊपर कहीं नीम की निंबोली पड़ी हो और कुछ समय पश्चात् वहाँ से नीम की डाली भी उगने लगती है, परंतु वह नीम की डाली आम का पाक नहीं है; उसीप्रकार आत्मा में शुभाशुभ परिणाम उत्पन्न होते हैं, परंतु वह आत्मा का पाक नहीं है, कर्म का पाक है।

पुण्य-पाप का अनुभव कड़वा है, वह आनंददायक नहीं है। आत्मा चैतन्यस्वरूपी होने से आनंदकंद प्रभु है, उसका पाक कड़वा नहीं हो सकता है। आत्मा का पाक तो अनाकुल शांति का वेदन है। जो पुण्य-पापरूप आकुलता-परिणाम को आत्मा मानता है, वह वीतराग की वाणी को समझता नहीं है। आत्मा चैतन्यस्वभावमय होने से पुण्य-पाप से अलग है-यह युक्ति है और भेदज्ञानी पुण्य-पापरहित चैतन्यस्वभाव का अनुभव करते हैं-यह स्वानुभव है।

व्रत और अव्रत के जितने भी भाव हैं, वे सभी कर्म के विपाक हैं। पुण्य-पाप के परिणाम भी कर्म के विपाक हैं। प्रतिक्रमण आदि के भाव भी कर्म के विपाक हैं। देवपूजा, गुरुपास्ति, स्वाध्याय आदि के भाव भी कर्म के विपाक हैं। इसप्रकार सर्वज्ञदेव का वचन है।

प्रश्न - यदि सभी शुभभाव कर्म के विपाक हैं, तो हम शुभभाव करना छोड़ देंगे ?

उत्तर - यदि शुभभाव छोड़कर आत्मा का अनुभव करते हो तो भला है, परंतु शुभभाव छोड़कर अशुभभावरूप आचरण करना योग्य नहीं है। शुभभाव तो जब छूटेंगे तब छूटेंगे परंतु शुभभाव में धर्म मानना तो तत्काल छोड़ देना चाहिये। यदि यह मान्यता रही कि शुभभाव करते-करते धर्म हो जायेगा तो तीन लोक और तीन काल में भी धर्म की प्राप्ति नहीं होगी। शुभाशुभ भाव से भिन्न अद्‌भुत स्वभाव की प्रतीति करने से ही अद्‌भुत स्वभाव प्रगट होगा।

प्रश्न - शुभभाव करते-करते धर्म नहीं होता है तो यह जानते हुए भी ज्ञानी शुभभाव क्यों करते हैं ?

उत्तर - ज्ञानियों को भी जब तक पूर्ण वीतरागता प्रगट न हो जाये, तब तक अशुभभाव से बचने के लिये शुभभाव आते हैं। ज्ञानियों को शुभभाव की इच्छा नहीं है तथापि शुभभाव आये बिना रहते नहीं हैं। किंतु यहाँ तो वस्तुस्वरूप बताया जा रहा है। शुभभावरूप होते हुए भी ज्ञानी उसे अपना स्वरूप नहीं मानते, शुभभाव में धर्म होना नहीं मानते। ज्ञानियों की दशा बहुत विचित्र है। यद्यपि शुभाशुभभाव आत्मा में उत्पन्न होते हैं, कर्म में नहीं होते, फिर भी वे आत्मा के स्वरूप नहीं हैं, उनकी अवस्था कर्म के आधीन है, अतः उन्हें सर्वज्ञदेव ने पुद्‌गलद्रव्य से उत्पन्न परिणाम कहा है।

जब तक शुभाशुभ भाव रहते हैं, तब तक चित्त में चंचलता बनी रहती है अर्थात् 'इसका भला कर दूँ' अथवा 'इसका बुरा कर दूँ'—इसप्रकार परिणाम होते रहते हैं और चित्त भी अस्थिर बना रहता है। परंतु जब ज्ञानस्वभावी ध्रुवतत्त्व पर दृष्टि जाती है तो परम उदासीन दशा हो जाती है। सर्व चंचलता का नाश होकर निश्चल दशा प्रगट हो जाती है। अत: शुभाशुभ भाव से दृष्टि हटाकर स्वभाव पर दृष्टि ले जाना योग्य है।

सम्यग्दृष्टि ज्ञानी को तो आंशिक शुद्धि प्रगट हुई है तथापि उसे शुभभाव के साथ-साथ किंचित् अशुभभाव भी आता है। अत: अशुभभाव तो दूर करने के लिये पुरुषार्थपूर्वक शुभभाव में प्रवृत्त होता है, किंतु उसे भी आदरणीय नहीं मानता। वह जानता है कि यह राग है, आस्रवभाव है, दु:ख है, विभाव है, बंधन है—इसप्रकार वह उनका कर्ता भी नहीं होता। ज्ञानी का झुकाव पूर्णतया स्वरूप में स्थिर हो जाने की ओर ही लगा रहता है, किंतु वह पुरुषार्थ की मंदता के कारण शुभभाव में प्रवृत्ति भी करता है।

इसप्रकार पाँचवें बोल में यह सिद्ध किया कि आत्मा पुण्य-पाप आदि भावों का कर्ता नहीं है।

(६) अब छठवें बोल में यह सिद्ध करते हैं कि साता-असातारूप सुख-दु:ख परिणाम का भोक्ता भी आत्मा नहीं है।

साता-असातारूप से व्याप्त समस्त तीव्रता-मंदतारूप गुणों के द्वारा भेदरूप होता हुआ कर्म का अनुभव भी जीव नहीं है, क्योंकि सुख-दु:ख से भिन्न चैतन्यस्वभावरूप जीव भेदज्ञानियों के द्वारा स्वयं उपलभ्यमान है अर्थात् वे स्वयं उसका प्रत्यक्ष अनुभव करते हैं।

अज्ञानी यह मानता है कि अनेक प्रकार की अनुकूलताओं से युक्त साता का वेदन तथा अनेक प्रकार की प्रतिकूलताओं से युक्त असाता के वेदन के अतिरिक्त आत्मा का स्वरूप कुछ भी नहीं है। आत्मा साता और असाता दोनों का भोग न करे, ऐसा कभी भी बन नहीं सकता। प्रत्येक समय साता या असाता में से किसी न किसी एक का भोग अवश्य ही करता है। ऐसा भी नहीं बन सकता कि आत्मा सदाकाल साता का ही भोग करता रहे अथवा असाता का ही भोग करता रहे। यदि वह साता का भोग करने में समर्थ है तो उसे असाता का भी भोग करना चाहिए और यदि वह असाता का भोग करने में समर्थ है तो उसे साता का भी भोग अवश्य ही करना चाहिए-क्योंकि दोनों से भिन्न आत्मा कभी भी लक्षित नहीं होता। अत: अज्ञानी जीव को साता-

असातारूप ही मानता है।

यहाँ आचार्य कहते हैं कि पाँच लाख रुपये का मकान बनाकर उसमें रहने पर जो हर्ष का परिणाम होता है, वह सातावेदनीय कर्म का अनुभव है अथवा बालक को परीक्षा में प्रथम श्रेणी में पास होने से जो अत्यंत खुशी का भाव है, वह भी सातावेदनीय का अनुभव है। वह जीव का अनुभव नहीं है।

इसीप्रकार असाता कर्म के उदय में भारी नुकसान या स्त्री, पुत्रादि की मृत्यु हो जाये, उससमय जो शोक का परिणाम होता है, वह असातावेदनीय का अनुभव है अथवा बालक को परीक्षा में फेल हो जाने पर जो तीव्र आकुलता का भाव होता है, वह भी असातावेदनीय का अनुभव है। वह जीव का अनुभव नहीं है।

आत्मा की पर्याय में साता-असाता वेदनीयकर्म के उदय में जो भी हर्ष-शोक, रति-अरति का परिणाम होता है, वह सब कर्म का अनुभव है, जीव का अनुभव नहीं है, क्योंकि आत्मा ज्ञानस्वभावी चैतन्यसत्ता है—उससे हास्यादि के भाव अत्यंत भिन्न हैं-यह युक्ति है। और भेदज्ञानियों को आत्मा का अनुभव करते समय हर्ष-शोक, रति-अरति, सुख-दुःख के वेदन से रहित चैतन्यमय जीवपदार्थ ही वेदन में आता है, अन्य नहीं—यह स्वानुभव है। इसप्रकार आचार्य ने स्वानुभवगर्भित युक्ति से अज्ञानी की मान्यता का खंडन किया।

ज्ञानियों को चतुर्थगुणस्थान के ऊपर हर्ष-शोक का वेदन नहीं होता-ऐसा नहीं है। आत्मा की अंतर्दृष्टि की मुख्यता में हर्ष-शोकादि के परिणाम को गौण किया है, परंतु वास्तव में राग-द्वेषादि के जितने भी परिणाम होते हैं, उन सब का वेदन उस काल उस जीव को अवश्य होता है।

हर्ष-शोकादि के परिणाम आत्मा का स्वभाव नहीं हैं, विभाव हैं, इसलिए भी स्वभाव को मुख्य करने पर हर्ष-शोकादि के परिणामों को गौण करके व्यवहार कहकर अभूतार्थ भी कहा है। इसप्रकार यथार्थ वस्तुस्वरूप को समझना चाहिये।

कुछ लोग साता के रस का उत्कृष्ट वेदन होने पर उसे ही आत्मा की शांति मान लेते हैं। उन्हें कहते हैं कि आत्मा की शांति पाप के सूक्ष्म रस से भिन्न तो है ही, परंतु पुण्य के सूक्ष्म रस से भी भिन्न है। पुण्य-पाप का रस जड़कर्म का रस है और आत्मा का रस चैतन्यरस है। आत्मा में साता के रस का सूक्ष्म अंश भी अनुभव में आये तो वह आत्मा का रस नहीं है, वह जड़कर्म

का रस है। जो साता के रस को आत्मा का रस मानता है, वास्तवमें वह अभी भूल में है।

कई लोग कहते हैं कि हमें ध्यान में शांति का वेदन होता है, प्रकाश.... प्रकाश दिखाई देता है, आनंद..... आनंद की तरंगें हिलोरें लेने लगती हैं, किंतु वे सब जड़ के प्रकाश को आत्मा का प्रकाश और जड़ के आनंद को आत्मा का आनंद मान रहे हैं, क्योंकि आत्मा का अरूपी-ज्ञानप्रकाश वर्ण, गंध, रस और स्पर्श से रहित है। जिसप्रकार ट्यूबलाइट का प्रकाश होता है, उससे भी अनंतगुना प्रकाश आत्मा का है—ऐसा अज्ञानी मानते हैं; परंतु इसप्रकार मानना बिलकुल गलत है, क्योंकि आत्मा के ज्ञानप्रकाश की जाति ही जड़प्रकाश से भिन्न है; अत: उससे उसकी तुलना अशक्य है। तथा जिसप्रकार विषय-भोगों को भोगने में आनंद आता है, उससे भी अनंतगुना आनंद आत्मा का है—ऐसा अज्ञानी मानते हैं; परंतु इसप्रकार मानना भी ठीक नहीं है, क्योंकि आत्मा के अतीन्द्रिय आनंद की जाति ही इंद्रियजनित आनंद से भिन्न है; अत: इंद्रियसुख से अतीन्द्रियसुख की तुलना नहीं की जा सकती।

अज्ञानी को आत्मा की वास्तविक महिमा का तो पता नहीं है, अत: आत्मा की महिमा में भी जड़ की महिमा के गीत गाने लगता है। अरे! अनादिकाल से जड़ की महिमा की है, उससे आत्मा का क्या कल्याण हो गया? आत्मा को क्या लाभ हुआ? इससे सिद्ध होता है कि जिन्हें आत्मस्वभाव की यथार्थ प्रतीति नहीं, वे आत्मा की कितनी भी महिमा करें, जड़ की ही महिमा होगी और उससे किंचित् भी आत्मा का हित नहीं होगा।

अज्ञानी से आत्मा के सम्बन्ध में प्रश्न पूछे जायें तो उसका एक प्रश्न का उत्तर भी सम्यक् नहीं होगा। अरे भाई! आत्मा का अनुभव करने के पूर्व आत्म-वस्तु का निर्णय अवश्य कर। आत्मा अनंत गुणों का अखंड-पिण्ड है, वह उसके गुण तथा पर्याय से परिपूर्ण है, एक रजकण का भी कर्ता नहीं है। प्रत्येक रजकण भी अपने गुण-पर्यायों से परिपूर्ण है। आत्मा का कार्य आत्मा में और रजकण का कार्य रजकण में होता है, दोनों के कार्य भिन्न-भिन्न हैं; जिसे ऐसी प्रतीति नहीं है और ध्यान कर रहा हो, वह भी मार्ग पर नहीं है, बंधन के मार्ग पर ही है।

(७) अब यहाँ अज्ञानी कहता है कि मात्र कर्म का अनुभव तो जीव नहीं है परंतु आत्मा और कर्म दोनों का मिला हुआ अनुभव तो जीव है। उसे उत्तर देते हुए आचार्य सातवाँ बोल कहते हैं कि:—

श्रीखंड की भाँति उभयात्मकरूप से मिले हुए आत्मा और कर्म दोनों भी जीव नहीं हैं,

क्योंकि संपूर्णतया कर्मों से भिन्न अन्य चैतन्यस्वभावरूप जीव भेदज्ञानियों के द्वारा स्वयं उपलभ्यमान है अर्थात् वे उसका प्रत्यक्ष अनुभव करते हैं।

अज्ञानी श्रीखण्ड के समान आत्मा और कर्म को एक मानता है। वास्तव में तो वह किसी न किसी तरह कर्म को, जड़शरीर को, राग-द्वेष-मोहादि विकारी भावों को ही आत्मा मान रहा है। जैसा बाह्य में उसे उदाहरण मिल जाता है वैसा आत्मा का स्वरूप मान लेता है। यहाँ पर श्रीखण्ड का उदाहरण मिल गया तो वह श्रीखण्ड के समान आत्मा और कर्म दोनों मिलकर जीव हैं—यह मानने लगा है। उसे वास्तविक वस्तुस्वरूप से कोई मतलब नहीं है।

राग-द्वेष आदि विकारी भावों का कर्ता पचास प्रतिशत आत्मा है और पचास प्रतिशत कर्म है—ऐसा अज्ञानी मानता है। परंतु यहाँ निमित्त की अपेक्षा से कथन करते हुए आचार्य कहते हैं कि रागादि विकारी भाव का कारण कर्म का उदय ही है, आत्मा और कर्म दोनों मिलकर नहीं। अध्यात्म में रागादि भावों को पुद्गलमय ही कहा है, क्योंकि भेदज्ञानियों को जब आत्मा का अनुभव होता है तब शुद्ध चैतन्यघन आत्मा का ही अनुभव होता है, रागादि भावों का नहीं। अतः जीव संपूर्णतया कर्म से भिन्न, चैतन्यस्वभावरूप ही है।

अज्ञानी कहता है कि जीव जब सिद्धदशा प्राप्त करता है, तब तो समस्त कर्म से रहित होता है, परंतु जबतक सिद्धदशा न हो तबतक तो कर्म और आत्मा एक हैं, तथा दोनों मिलकर कार्य भी करते हैं।

आचार्य उसका उत्तर देते हैं कि ऐसा त्रिकाल में भी नहीं होता, क्योंकि जो पहले कर्म और आत्मा एक हो जायें तो सिद्धदशा में कभी अलग-अलग नहीं हो सकते। और यदि सिद्धदशा में कर्म और आत्मा का अलग-अलग होना मानते हो तो संसार-अवस्था में भी अलग-अलग मानना चाहिये।

देवाधिदेव तीर्थंकर भगवंतों का यह निश्चित सिद्धांत है कि एक द्रव्य दो परिणाम को धारण नहीं करता और दो द्रव्य कभी एक परिणाम के कर्ता नहीं होते।

वही नाटक समयसार में कहा है :—

एक परिनाम के न करता दरब दोय।
दोय परिनाम एक दर्ब न धरतु है॥

कर्म की अवस्था को आत्मा भी करे और कर्म भी करे—यह नहीं हो सकता और इसीप्रकार आत्मा चैतन्यभाव भी करे और कर्म की अवस्था भी करे—ऐसा तीन लोक और

तीन काल में भी नहीं हो सकता। यदि यह सिद्धांत भली प्रकार समझ में आ जाये तो आत्मा का हित हुए बिना रहे नहीं अर्थात् आत्मा का हित अवश्य होवे। इस सिद्धांत को समझने से आत्मा का हित अवश्य होता ही है।

(८) कुछ अज्ञानी मानते हैं कि अर्थक्रिया (प्रयोजनभूत क्रिया) में समर्थ कर्म का संयोग ही जीव है, क्योंकि जिसप्रकार आठ लकड़ियों के संयोग से भिन्न कोई पलंग दिखाई नहीं देता; उसीप्रकार कर्म के संयोग से भिन्न कोई जीव दिखाई नहीं देता।

उससे आचार्य आठवाँ बोल कहते हैं कि जिसप्रकार आठ लकड़ियों से बना पलंग भिन्न दिखाई देता है और उस पर सोनेवाला पुरुष प्रत्यक्ष भिन्न दिखाई देता है; उसीप्रकार आठ प्रकार के कर्मों का संयोग भिन्न अनुभव में आता है और उससे भिन्न आत्मा प्रत्यक्ष अनुभव में आता है।

अज्ञानी की मान्यता है कि अर्थक्रिया (प्रयोजनभूत क्रिया) में समर्थ कर्म का संयोग जीव है। जो अर्थक्रिया में समर्थ नहीं है, ऐसे कर्म का संयोग जीव नहीं है। जिसप्रकार पलंग की आठ लकड़ियों में एक लकड़ी का भी अभाव होने पर वह अर्थक्रिया में समर्थ नहीं होता है; उसीप्रकार अर्थक्रिया में समर्थ कर्म का संयोग ही जीव है, अन्य नहीं।

आचार्य उससे कहते हैं कि प्रत्येक द्रव्य अपनी-अपनी प्रयोजनभूत क्रिया करता है और उसे करने में समर्थ है। एक द्रव्य दूसरे द्रव्य की प्रयोजनभूत क्रिया नहीं करता है और उसे करने में समर्थ भी नहीं है। कर्म का संयोग कर्म की प्रयोजनभूत क्रिया करने में समर्थ है, जीव की नहीं। अत: जीव कर्म के संयोग तथा उसकी क्रिया से भिन्न ही है और ऐसा ही भेदज्ञानी प्रत्यक्ष अनुभव करते हैं।

जगत में कहा जाता है कि ज्ञानावरणी कर्म ने ज्ञानगुण को, दर्शनावरणी कर्म ने दर्शनगुण को, मोहनीय कर्म ने श्रद्धा तथा चारित्र गुण को तथा अंतराय कर्म ने वीर्यगुण को रोक रखा है। वास्तव में इन कर्मों ने इन्हें नहीं रोक रखा है, बल्कि जब आत्मा स्वयं राग-द्वेष में फंसकर अपनी ज्ञान-अवस्था को हीन करता है, तब ऐसा आरोप आता है कि ज्ञानावरणी कर्म ने ज्ञान को रोक रखा है। इसीप्रकार अन्य दर्शन, श्रद्धा, चारित्र, सुख आदि गुणों के संबंध में भी समझ लेना चाहिए।

इस जीव को कर्म ने अपने वश में करके संसार में रुलाया नहीं है, बल्कि यह जीव

स्वयं कर्म के वशीभूत होकर संसार में रुला है। यह जीव स्वयं अपने स्वभावरूप परिणमित न होकर, स्वयं ही राग-द्वेषरूप, दुःखरूप, आकुलतारूप परिणमित हो रहा है अर्थात् स्वयं अपने गुण की स्वाभाविक अवस्था के पराधीन करके हीन बना रहा है। उसमें कर्म तो निमित्त मात्र अर्थात् उपस्थित मात्र हैं। इसप्रकार वस्तु का परमस्वाधीन स्वरूप होने पर भी यह कहता है कि कर्म ने आवरण डाला है। अरे! यह कहते हुए तुझे लज्जा नहीं आती? दोष स्वयं करता है और आरोप अन्य पर लगाता है। अपनी प्रभुता को स्वयं खोता है और कहता है कि कर्म के कारण प्रभुता खोई? कर्म तो बेचारे जड़ हैं, कुछ जानते नहीं, उनमें क्या ताकत है कि वे जीव की ज्ञान-शक्ति को क्षीण करें।

जिसप्रकार बाजार में माल आता है, वह अपनी कीमत के कारण आता है, उसमें बारदाना निमित्त मात्र है, बारदाना के कारण कोई माल नहीं आया है, बारदाना बारदाना में है और माल माल में है; उसीप्रकार जब आत्मा स्वयं केवलज्ञानरूप परिणमित होता है, तो वह स्वयं अपने कारण से परिणमित होता है, उसमें केवलज्ञानावरणी कर्म के उदय का अभाव निमित्तमात्र है, केवलज्ञानावरणी कर्म के कारण कोई केवलज्ञान नहीं हुआ है, केवलज्ञानावरणी कर्म अपने में है और केवलज्ञान अपने में है।

इसप्रकार ४४वीं गाथा में आचार्य अमृतचंद्र ने अज्ञानी की आठ प्रकार की मान्यताओं का आगमप्रमाण और स्वानुभवगर्भित युक्ति द्वारा खंडन किया है। इसीप्रकार अन्य अनेक मान्यताओं का भी आगम तथा स्वानुभवगर्भित युक्ति के माध्यम से निश्चय करना चाहिए।

फरवरी सन् १९८१ में होनेवाली जनगणना में धर्म के कालम में जैन लिखाएँ

मनोगुप्ति, वचनगुप्ति, कायगुप्ति

परमपूज्य दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्द के प्रसिद्ध परमागम 'नियमसार' की ६६वीं, ६७वीं तथा ६८वीं गाथाओं एवं उनमें समागत श्लोक नं० ९१ पर हुए पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है। मूल गाथाऐं इसप्रकार हैं—

कालुस्समोहसण्णारागद्दोसाइअसुहभावाणं।
परिहारो मणुगुत्ती ववहारणयेण परिकहियं॥६६॥
थीराजचोरभत्तकहादिवयणस्स पावहेउस्स।
परिहारो वयगुत्ती अलियादिणियत्तिवयणं वा॥६७॥
बंधणछेदणमारणआकुंचण तह पसारणादीया।
कायकिरियाणियत्ती णिद्दिट्ठा कायगुत्ति त्ति॥६८॥

जिसके परिणाम में कलुषता न हो, मोह अर्थात् आत्मस्वरूप में असावधानी न हो, चैतन्यस्वभाव की सावधानी हो, आहार-भय-मैथुन-परिग्रह संज्ञा न हो और राग-द्वेष इत्यादि अशुभभावों का परिहार हो—उस मुनि को व्यवहारनय से मनोगुप्ति कही है। यह व्यवहारमनोगुप्ति शुभभाव है।

पाप के हेतुभूत ऐसे स्त्रीकथा, राजकथा, चोरकथा, भक्तकथा इत्यादि रूप वचनों का परिहार अथवा असत्यादिक की निवृत्तिवाले वचन, वह वचनगुप्ति है।

काय को गोपने की क्रिया आत्मा नहीं करता, मुनिदशा में तत्संबंधी विकल्प सहज उठता है, वह व्यवहारकायगुप्ति है। विकल्प तोड़कर स्वभाव में ठहरना, वह निश्चयकायगुप्ति है। किसी को बाँधना, मारना तथा संकोचना, विस्तारना आदि शरीर की प्रवृत्ति के राग को छोड़ना, व्यवहारकायगुप्ति है।

मुनि के मुनिपने के योग्य शुद्धपरिणति के साथ वर्तता हुआ जो हठरहित मन आश्रित, वचन आश्रित अथवा काय आश्रित शुभोपयोग है, उसको व्यवहारगुप्ति कहते हैं, कारण कि

शुभोपयोग में मन, वचन, काय के साथ अशुभोपयोगरूप जुड़ान नहीं है। शुद्धपरिणति न हो वहाँ शुभोपयोग हठसहित होता है, उसे तो व्यवहारगुप्ति भी नहीं कहते।

छठे गुणस्थानवर्ती मुनि को आकाश ही एक वस्त्र है। उनको आत्मा के भान और रमणतासहित शुद्ध वीतराग परिणति वर्तती है, उस परिणति के साथ मन-वचन-काय-आश्रित हठरहित सहज शुभविकल्प होता है, उसे व्यवहारनय से गुप्ति कहते हैं। चैतन्य ज्ञाता-दृष्टा आत्मा के भान बिना अकेला शुभभाव तो व्यवहार से भी गुप्ति नहीं कहा जाता, क्योंकि जहाँ आत्मभानसहित शुद्धपरिणति न हो वहाँ शुभभाव हठसहित ही होता है-सहज नहीं। शुभभाव कहो, विभाव कहो, व्यवहारगुप्ति कहो, सब एक ही है। अंतर शुद्धपरिणमन हो तब उस विकल्प को व्यवहार कहा जाये, अन्यथा उसे व्यवहार भी नहीं कहा जा सकता।

शुभभाव अशुभभाव को तो रोकता है न?

भाई! क्या अशुभभाव आनेवाला था और उसे रोका गया है? वास्तव में तो मुनिदशा की उस भूमिका में शुभभाव होने पर उतने अंश में अशुभभाव उत्पन्न ही नहीं होता—इसलिए अशुभ को रोका ऐसा व्यवहार से कहा जाता है।

क्रोध, मान, माया और लोभ नामक चार कषायों से क्षुब्ध हुआ चित्त वह कलुषता है और वह मुनि के नहीं होती। उपशमरस का पान करनेवाले मुनि के तीव्र क्रोधादि कलुषता नहीं होती। मुनि के मोह अर्थात् मिथ्यात्व—आत्मा आदि तत्त्वों का अभान नहीं होता। चार संज्ञा—आहार, भय, मैथुन, परिग्रह मुनि के नहीं होतीं।

शुभराग और अशुभराग—इस तरह दो प्रकार का राग होता है। विषय-कषाय का भाव तो अशुभराग है और व्यवहारसमिति-गुप्ति, देव-गुरु-शास्त्र के प्रति राग शुभराग है। एक अप्रशस्त है और दूसरा प्रशस्त है—दोनों ही आस्रव हैं। इन दो में से अशुभ परिणाम का—राग का परिहार तो व्यवहारगुप्ति है और शुभराग का भी परिहार अर्थात् निर्विकल्प स्वरूप में लीन होना निश्चयगुप्ति है।

असह्यजनों के प्रति अथवा असह्य पदार्थसमूह के प्रति वैर का परिणाम वह द्वेष है। मुनि के प्रति विरोधीजन कठोर शब्द कहें, कर्ण पीड़ाकारक दुर्वचन कहें, तथापि मुनि को खेद अथवा वैर का भाव नहीं होता। मुनि समझते हैं वे जीव अपनी रुचि अनुसार भाव करते हैं तो करें, उनसे मेरी आत्मा को कोई हानि होनेवाली नहीं है; मैं तो चिदानंदमूर्ति ज्ञान-स्वभावी

हूँ—मेरे में वे गालियाँ प्रवेश नहीं कर जातीं। असह्यजनों में जीव को और असह्य पदार्थों में अजीव पदार्थ लिया है। मुनि के शरीर में तीक्ष्ण भाला जैसा काँटा लगे तो भी उसके प्रति उन्हें द्वेषभाव नहीं होता। मुनि तो अकषाय शांतभाव में झूलते होते हैं। कोई विरोधी उन्हें अग्नि की चिता या बर्फ की शिला पर डाल दे तथापि द्वेषभाव नहीं होता। मुनि के अंदर स्वभाव की श्रद्धा-ज्ञानसहित स्थिरता से अमृत का झरना झरता है। अंदर त्रिकालीस्वभाव और वर्तमान पर्याय के बीच में मिथ्यात्वरूपी ताला पड़ा था, वह स्वभाव के भान से खुलने पर अंदर से शांति का फव्वारा फट गया है। अंदर चैतन्य-पिटारा अमृत से भरपूर पड़ा है, वह पिटारा राग के साथ एकत्वबुद्धि के कारण बंद था, उसको वीतरागी मुनियों ने राग से भिन्न आत्मा को जानकर उद्घाटित कर दिया है।

मिथ्यात्व को शास्त्र में अशुभभाव कहा है। जहाँ तक मिथ्यात्व रहता है, वहाँ तक वास्तव में अन्य अशुभभाव भी छूटते नहीं हैं। दर्शनमोह के अभाव बिना व्यवहारसमिति अथवा गुप्ति नहीं हो सकती, इसीलिए व्यवहारगुप्ति की प्रथम गाथा में मुनि के मोह का परिहार लिया है।

संसार के कारणों से आत्मा का गोपन करना वह गुप्ति है। अशुभभाव तथा दया, दान, व्रत, व्यवहारसमिति-गुप्ति इत्यादि शुभभाव—आस्रव हैं—धर्म नहीं। आत्मा के भानसहित अंदर वीतरागी एकाग्रता प्रकट करना—वही धर्म है।

अशुभ का त्याग और वर्तमान परिणाम में जो शुभभाव वर्तता है, वह व्यवहारगुप्ति है, बाकी तो भावपाप और भावपुण्य दोनों आस्रव ही हैं। स्वभाव के भान की भूमिका में अशुभ छूटकर, जो मन-वचन-काय की तरफ के परिणाम के गोपन का शुभविकल्प है, उसे व्यवहारगुप्ति कहते हैं। इस गुप्ति का अंश अपनी भूमिका प्रमाण पाँचवें गुणस्थानवाले के भी होता है।

गुप्तिर्भविष्यति सदा परमागमार्थ-
चिंतासनाथमनसो विजितेन्द्रियस्य।
बाह्यान्तरं गपरिषंगविवर्जितस्य,
श्रीमज्जिनेन्द्रचरणस्मरणान्वितस्य॥९१॥

श्री समयसार, प्रवचनसार, नियमसार, पंचास्तिकाय, षट्खंडागम इत्यादि शास्त्र जो

महासमर्थ दिगम्बर मुनियों ने रचे हैं, उन्हें परमागम कहते हैं। मुनि का मन इस परमागम के चिंतन से युक्त है अर्थात् वह कुशास्त्र की ओर नहीं जाता। दिगम्बर शास्त्रों के अतिरिक्त अन्य शास्त्रों को परमागम नहीं कहते। यहाँ चरणानुयोग आदि के सभी शास्त्र जो परमात्मतत्त्व की भावनावाले संतों द्वारा रचित हैं, वे परमागम हैं।

जो मुनि विजितेन्द्रिय है, जिसने विशेषपने इंद्रियों को जीता है, जो बाह्य संग अर्थात् वस्त्र-पात्रादि तथा अभ्यंतर संग अर्थात् मिथ्यात्वादि चौदह अभ्यंतर परिग्रह—इसप्रकार सर्व परिग्रह से रहित है, और जो श्रीजिनेन्द्रदेव के चरण के स्मरण से संयुक्त है अर्थात् भगवान जिनेन्द्रदेव वस्तु का स्वरूप ऐसा कहते हैं, भगवान की आज्ञा ऐसी है, भगवान कथित निश्चय और व्यवहार का स्वरूप ऐसा है—इसप्रकार जिसका मन सदा जिनचरण-स्मरणयुक्त है, उसी को सदा गुप्ति होती है। आत्मा के भान बिना नग्न रहनेवाले साधु नहीं कहे जा सकते। यहाँ तो वीतराग के चरणस्मरणयुक्त अर्थात् वीतराग की आज्ञा के विचार-युक्त है, उसको जो वीतराग परिणति प्रकट हुई है, वह निश्चय है, और उसके साथ जो विकल्प है, वह व्यवहार है।

यह स्त्री आई है, इसका रूप इतना सुंदर है, इत्यादि पापकथा वह स्त्रीकथा है। अमुक राजा जीतेगा, अमुक राजा हारेगा, इत्यादि पापकथा वह राजकथा है। अमुक मिष्ठान्न बहुत सरस है, इसप्रकार भोजन की प्रशंसा वह भोजनकथा है—पापकथा है। अमुक चोर चोरी करने में विशेष कुशल है, इत्यादि पापकथा वह चोरकथा है।

मुनिराज ऐसी कथा नहीं करते तथा असत्यादि वचन अथवा तदतिरिक्त अन्य अप्रशस्त वचन नहीं बोलते अर्थात् ऐसा बोलने का उनको भाव नहीं होता। यह मुनि की व्यवहार-वचनगुप्ति है।

जिनकी विषय की वासना अति वृद्धिंगत हुई हो ऐसे कामीजनों के द्वारा करने में आती हुई स्त्रियों की संयोग-वियोग संबंधी कथा तथा राजा की युद्ध की कारणभूत कथा इत्यादि पापकथा में मुनि नहीं पड़ते। मुनि तो आत्मा की कथा कहते हैं न कि ऐसी पापकथा ?

गृहस्थ को भी आंशिकरूप से यह वचनगुप्ति होती है। अति वृद्धिप्राप्त भोजन की गृद्धि से पूड़ी-दही-पापड़ आदि भोजन संबंधी कथा वह भोजनकथा है। मुनि ऐसी भोजन आदि की प्रशंसा-वाणी का उच्चारण नहीं करते। इस पापकथा का त्याग, असत्यवचन का त्याग तथा तदुपरांत अशुभवचन का त्याग, वह निश्चय के भानसहित—दर्शनमोह आदि रहित मुनि की

व्यवहारगुप्ति है। गुप्ति के विकल्परहित अंदर ज्ञानानंदस्वभाव में ठहर जाना निश्चयगुप्ति है।

आचार्यप्रवर श्री पूज्यपादस्वामी ने समाधितंत्र के सत्रहवें श्लोक में कहा है कि—इसप्रकार बहिर्वचनों को त्यागकर अंतर्वचनों को अशेषतः (संपूर्णरूप से) त्यागना—यह संक्षेप से योग अर्थात् समाधि है और यह योग परमात्मा को प्रकाशनेवाला दीपक है।

यहाँ मुनि की वचनगुप्ति की व्याख्या चल रही है। आत्मा ज्ञानस्वभावी त्रिकाली वस्तु है, वाणी तथा पुण्य-पाप के भावों का लक्ष्य छोड़कर उस आत्मा में एकाग्र होना वह वचनगुप्ति है। बाह्यवचन को त्यागकर अर्थात् उधर का लक्ष्य छोड़कर तत्पश्चात् अंतर्वचन जो पुण्य-पाप का उत्थान-विकल्प उसको भी संपूर्णरीत्या छोड़कर, आत्मा को ध्याने का नाम सच्ची वचनगुप्ति है। यह संक्षेप से योग है कि जो परमात्मा को—निजशुद्धात्मा को प्रकाशित करनेवाला दीपक है। आत्मा ज्ञानानंद चैतन्यस्वभाव है उसमें एकाग्र होना वह योग है—वह धर्म है, शेष जो दया-दान आदि पुण्यरूप विकल्प होते हैं, वे धर्म नहीं हैं। कितने ही अन्यमति 'चित्तवृत्तिनिरोधोयोगः' कहते हैं वह मात्र नास्ति से कथन है, परंतु अस्ति के बिना नास्ति करेगा किसमें? त्रिकाली चैतन्यस्वभावरूप अस्ति में एकाग्रता से पुण्य-पाप आदि विकार की नास्ति हो जाती है—स्वरूप में एकाग्र होने पर पुण्य-पाप आदि अन्य चिंता-विकल्प का निरोध हो जाता है, वह सच्चा योग है और वही सच्चा धर्म है। यह योग परमात्मा अर्थात् चैतन्यस्वभावी ज्ञानानंदस्वरूप आत्मा को प्रकाशित करने के लिये दीपक है। ऐसे परमात्मस्वरूप के भान बिना किसी भी प्रकार से मन-वचन-काय की क्रिया अथवा पुण्य का विकल्प करे यह योग नहीं है।

यहाँ 'बहिर्वचनों को त्यागकर' ऐसा कहा, वहाँ बहिर्वचन तो जड़ है—पुद्गल की अवस्था है, उसका आत्मा कर्ता अथवा त्यक्ता नहीं है, परंतु बहिर्वचन का लक्ष्य छोड़ने पर बहिर्वचन त्यागा—ऐसा व्यवहार से कहा जाता है। पुनः अंतर्वचन का—शुभाशुभ विकल्पों का त्यागना, यह भी एक कथन की रीति है। वास्तव में तो स्वभाव में एकाग्र होने पर शुभाशुभ विकल्प होते ही नहीं, तब उनको त्यागा—ऐसा कहा जाता है।

धर्मी को आत्मा के सिवा कहीं अच्छा नहीं लगता

सम्यग्दृष्टि को आत्मा के सिवा कहीं अच्छा नहीं लगता, जगत की कोई वस्तु सुंदर नहीं लगती। जिसे चैतन्य की महिमा एवं रस लगा है, उसको बाह्य विषयों का रस टूट गया है, कोई पदार्थ सुंदर या अच्छा नहीं लगता। अनादि अभ्यास के कारण, अस्थिरता के कारण, अंदरस्वरूप में नहीं रहा जा सकता—इसलिए उपयोग बाहर आता है; परंतु रस के बिना-सब निःसार, छिलकों के समान, रस-कसशून्य हो ऐसे भाव से बाहर खड़े हैं ॥३२॥

'बहिनश्री के वचनामृत' पर पूज्य गुरुदेवश्री का प्रवचन—दिनांक ११-८-८०

सम्यग्दृष्टि को आत्मा को छोड़कर बाहर कहीं अच्छा नहीं लगता। दुनिया से भिन्न होकर अपने ज्ञानस्वभाव की दृष्टि जिसे हुई है—ऐसे सम्यग्दृष्टि को आत्मा को छोड़कर बाहर कहीं अच्छा नहीं लगता। आत्मा की ओर हुए झुकाव की मिठास के सामने बाहर कहीं अच्छा नहीं लगता। चक्रवर्ती का राज्य हो या इंद्र का इंद्रासन हो, धर्मी को बाहर कहीं रस नहीं आता। अतीन्द्रिय आनंद का रस आया, अनंत संपदा के स्वामीपने के सामने बाहर कहीं अच्छा नहीं लगता, पुण्य-भाव में भी अच्छा नहीं लगता।

जगत की कोई वस्तु सुंदर नहीं लगती। सर्वार्थसिद्धि के देव का पद भी अच्छा नहीं लगता। रजकण हो या वैमानकि देव की ऋद्धि हो-सब पुद्गल का एकस्वभाव है-ऐसा सम्यग्दृष्टि को लगता है।

जिसे चैतन्य भगवान के अतीन्द्रिय आनंद का रस लगा है, उसे बाहर के समस्त रस छूट गये हैं, क्योंकि एक म्यान में दो तलवार नहीं रह सकतीं। जिसे आत्मा का रस लगा है, उसे बाहर की संपूर्ण दुनिया में कहीं अधिकता नहीं लगती। जिसे बाहर की मिठास लगती है, उसे आत्मा की रुचि-महिमा नहीं आती है।

जिसे चैतन्य की महिमा का रस लगा है, उसे बाह्य विषयों का रस टूट गया है। भरत चक्रवर्ती के छियानवें हजार रानियाँ थीं, परंतु आनंद के रस की रुचि के सामने कहीं अच्छा नहीं लगता। जगत का कोई पदार्थ सुंदर नहीं लगता। प्रभु! सम्यग्दर्शन कोई ऐसी अलौकिक चीज़ है कि इस अतीन्द्रिय आनंद के वेदन के सामने सारी दुनिया तुच्छ लगती है, सुंदर या अच्छी नहीं लगती।

अनादि के अभ्यास के कारण, अस्थिरता के कारण, सम्यग्दृष्टि का उपयोग बाहर आता है, परंतु कहीं रस नहीं लगता। भरतजी और बाहुबलीजी दोनों सम्यग्दृष्टि होने पर भी अस्थिरता के कारण बाहर लड़ाई में भी खड़े दिखाई देते हैं, फिर भी दृष्टि तो ध्रुव पर ही चिपटी रहती है।

एक व्यक्ति को ऐसी आदत थी कि वर्ष में पूरे तीन सौ साठ दिन चूरमा ही खाता था। उसका जवान लड़का मर गया। लड़के को जलाकर आया और कहा कि अब रोटी बनाओ, चूरमा नहीं। रिश्तेदार कहते हैं कि तुमको रोटी नहीं पचेगी, वर्षों से चूरमा खाते हो इसलिए चूरमा लो। थाली में चूरमा और आँख में से आँसू की धारा बह रही है। चूरमा खाने का रस नहीं है। उसीप्रकार समकिती को बाहर की कोई चीज़ में रस नहीं है; भले ही अस्थिरता के कारण उपयोग बाहर जाता हो।

सम्यग्दृष्टि का उपयोग बाहर में जाता है, परंतु रस के बिना जाता है। लड़के को जलाकर आये और चूरमा खाये, कैसे रस आयेगा? इसीप्रकार समकिती को आत्मा के आनंद की खुराक के सामने जगत की अन्य चीजों का रस उड़ गया है। पुण्य का भाव आता है, परंतु उसका भी रस नहीं आता। शुभभाव आता है, फिर भी उससे भिन्न अतीन्द्रिय आनंद के रस के सामने सब नि:सार लगता है।

भाई! शब्दों का काम नहीं, पंडिताई का काम नहीं; जहाँ आत्मा का रस आया वहाँ चक्रवर्ती का राज्य भी छिलके के समान लगता है।

जिसप्रकार हाथी साबुत केंथ (कबीट) खाता है और पूरा का पूरा केंथ (कबीट) पेट में से निकल जाता है, परंतु अंदर से रस चूस लिया गया होता है और वह निकला हुआ केंथ (कबीट) रस-कसरहित होता है; उसीप्रकार आत्मा के आनंद के रस के सामने भले ही बाहर में, विषयादि में खड़ा दिखाई देता है; परंतु समकिती को तो सब रस-कसरहित लगता है। बाहर में खड़े होने पर भी अंदर में तो यह सब रस-कसरहित लगता है। जिसे आत्मा का भान हुआ, वह चाहे जो बाह्य संयोग में खड़ा रहे, उसे सब ही रस-कसरहित ही लगता है।

द्रव्यसंग्रह प्रवचन

वृहद्द्रव्यसंग्रह पर पूज्य स्वामीजी के प्रवचन सन् १९५२ में हुए थे। जिज्ञासु पाठकों के लाभार्थ उन्हें यहाँ क्रमशः दिया जा रहा है।

[गतांक से आगे]

अब 'कारण' शब्द की व्याख्या करते हैं:—

धर्म, अधर्म, आकाश, काल और पुद्गल—ये पाँचों द्रव्य जीव के शरीर, वाणी, मन, प्राण, उच्छ्वास, गति, स्थिति, अवगाहन और वर्तनारूप कार्य में निमित्त होने से व्यवहारनय से कारण कहे गये हैं। गुरु-शिष्य परस्पर एक-दूसरे को व्यवहारनय से उपकार करते हैं; परंतु पुद्गल आदि पाँच द्रव्यों के लिये जीव थोड़ा भी कारण नहीं है, उनका कुछ भी उपकार नहीं करता, इसलिये अकारण है।

तत्त्वार्थसूत्र में जीव का उपकार पुद्गल करता है, शरीर-वाणी आदि का निमित्त होने से उपकार निश्चित होता है—ऐसा कहा गया है। तथा आत्मा के दुःख में भी पुद्गल का उपकार स्पष्टरूप से वर्णित है। वास्तव में उपकार का अर्थ वहाँ निमित्तकारण से लिया गया है।

संसार में आत्मा के परिभ्रमण का निमित्तकारण कर्म और नोकर्म है। आत्मा जब बोलने का भाव करता है, तब वाणी पुद्गल के निमित्तपूर्वक निकलती है, यह उपकार जीव के लिये हुआ। यहाँ यह समझ लेना चाहिये कि जहाँ-जहाँ परद्रव्य से कार्य का होना कहा है, वह व्यवहारनय से कहा गया है, यथार्थतः नहीं। मोक्षमार्गप्रकाशक के पृष्ठ २५१ पर कहा है, "व्यवहारनय स्वद्रव्य-परद्रव्य को अथवा उनके भावों को अथवा कारण-कार्यादिक को किसी को किसी में मिलाकर निरूपण करता है, सो ऐसे श्रद्धान से मिथ्यात्व है।"

जब जीव स्वयं गति करता है, तब उसकी गति में धर्मास्तिकाय को निमित्तकारण कहते हैं; ऐसे ही स्थिति में अधर्मास्तिकाय; अवगाहन में आकाश और परिणमन में कालद्रव्य निमित्त हैं। पुद्गल की बात ऊपर आ ही गई है। इसप्रकार पुद्गल आदि पाँचों को निमित्तकारण कहकर जीव के सिवाय जगत में अन्य पाँच द्रव्यों का भी अस्तित्व है, यह ज्ञान कराया है।

अब जीव जीव का उपकार करता है, यह भी व्यवहार का कथन है, स्पष्ट करते हैं। गुरु समझाता है और शिष्य अपने क्षयोपशम के अनुसार समझता है। यहाँ गुरु निमित्तरूप उपकार

करता है—यह आशय है। तथा गुरु की आत्मा में अपनी योग्यताप्रमाण परिणमन होता है, तब शिष्य की उपस्थिति वहाँ होती है-यही कारण है कि शिष्य वहाँ निमित्तरूप उपकार करता है—यह कहा जाता है। आत्मा को आत्मा निमित्त होता है, यह बात तो कही ही गई है, परंतु आत्मा पुद्गल आदि द्रव्यों को निमित्तकारण भी नहीं है, यह बात भी यहीं कह दी है।

छहों (सभी) द्रव्य अपने-अपने कारण परिणमित होते हैं—इतना व्यवहारज्ञान भी जिसको नहीं है, उसे द्रव्यस्वभाव की खबर ही नहीं है। प्रत्येक द्रव्य की वर्तमान पर्याय स्वतंत्र है—ऐसा यथार्थ श्रद्धान-ज्ञान जिसको नहीं, उसे द्रव्य की स्वतंत्रता की बात नहीं बैठती। बैठे भी तो कैसे? जीव की नैमित्तिकदशा जब अपने कारण से होती है, तब पुद्गल आदि पाँचों द्रव्यों को निमित्त कहते हैं, इससे पाँच द्रव्य भी कारण हैं।

अब जीव द्रव्य किसमें कारण है और किसमें अकारण—स्पष्ट करते हैं। गुरु-शिष्य परस्पर एक-दूसरे का उपकार करते हैं—यहाँ एक जीव दूसरे को निमित्त है। गुरु के शब्दों का शिष्य के प्रति उपकार है अर्थात् पुद्गल जीव में कारण पड़ता है, यह बात तो है ही, यहाँ तो जीव में जीव को निमित्त कहा है, क्योंकि गुरु जो कहना चाहते हैं, वह शिष्य जानता है। तथा उसीसमय गुरु शिष्य की विनय भी जानता है। यहाँ गुरु का कहना और शिष्य की विनय परस्पर एक-दूसरे को उपकार है। गुरु का उपदेश और शिष्य द्वारा गुरु की सेवा आदि कार्य होना—यह बात पुद्गल को लेकर नहीं है, मात्र जीव में जीव की बात को लेकर है। तथापि पुद्गलादि पाँच द्रव्यों के प्रति जीव कुछ भी उपकार नहीं करता इससे अकारण है।

निगोद का जीव अपने कारण परिणमित होता है, तब उसमें कर्म निमित्त है। जीव गति करे इसमें धर्मद्रव्य, स्थित रहे इसमें अधर्मद्रव्य, परिणमन करे उसमें कालद्रव्य और जीव को अवगाहन देने में आकाशद्रव्य निमित्त हैं। इसप्रकार पाँचों द्रव्य जीव की अवस्थाओं में निमित्त हैं, परंतु पाँचों द्रव्यों की अवस्थाओं में जीव निमित्त नहीं है, अतः अकारण है।

'घड़ा बना' इसमें कुम्हार निश्चयकारण तो है ही नहीं, व्यवहारकारण भी नहीं है- ऐसा समझना। भाषावर्गणा और कार्माणवर्गणाओं की पर्यायें स्वतंत्र हैं, उनके होने में जीव व्यवहार से भी कारण नहीं है, इस कारण भी आत्मा अकारण है।

देखो! यहाँ बहुत सरल बात कहते हैं कि जब आत्मा स्वयं विकार करे तब कर्म को

कारण कहा जाता है, किंतु आत्मा जड़कर्मों की पर्याय के होने में निश्चयकारण तो है ही नहीं, व्यवहारकारण भी नहीं है।

भाषा के परिणमन में और शरीर के क्षेत्रांतर होने में आत्मा कारण नहीं है। यह वस्त्र ऊँचा उठा तो अपने कारण से—उसके ऊपर उठने में जीव निमित्तकारण नहीं है, क्योंकि जीव पुद्गल को अकारण है।

एक द्रव्य की पर्याय अन्य द्रव्य की पर्याय का कर्ता नहीं है। यहाँ तो जीव के व्यवहार से कारणपने का भी निषेध करते हैं। कोई भी जीव अन्य की अवस्था में व्यवहार से भी कारण नहीं।

एकबार निर्णय करके पुद्गल आदि की स्वतंत्र अवस्था में जीव कारण नहीं—इस निरपेक्ष क्रिया को समझ लेना चाहिये; क्योंकि इसे समझे बिना सापेक्षपना भी ख्याल में नहीं आता। इसप्रकार जीव अकारण है।

अब 'कर्ता' शब्द का स्पष्टीकरण देखिये:—

शुद्धद्रव्यार्थिकनय से जीव बंध-मोक्ष, द्रव्य-भावरूप, पुण्य-पाप तथा घट-पट आदि का कर्ता नहीं है। सम्यग्दर्शन स्वयं वीतरागी निर्मल पर्याय है, परंतु उसका ध्येय परम स्वभावभाव है। शुद्धद्रव्य को ही देखनेवाला ज्ञानपक्ष से बात करता है तथा शुद्ध द्रव्यार्थिकनय से ज्ञात शुद्धपारिणामिकभाव अथवा अनादि-अनंत एकस्वरूप को ही ग्रहण करता है अथवा जानता है। पुण्य-पाप की पर्याय अथवा मोक्षमार्ग की एकसमय की पर्याय को गौण करके नित्यानंद ध्रुवज्ञायक आत्मा शुद्धनिश्चयनय का विषय है। इस दृष्टि को मुख्य करके जाना जाये तो आत्मा मोक्ष की कारणभूत सम्यग्दर्शन आदि पर्यायों का कर्ता नहीं है तथा बंध के कारणभूत पुण्य-पाप आदि भावों का भी कर्ता नहीं है। कर्ता शब्द का अर्थ यहाँ परिणमन करानेवाले से है। शुद्धद्रव्यार्थिकनय के विषय में परिणमन और परिणमन-कर्ता ये दो भेद नहीं होते। संसारदशा के कारणभूत पुण्य-पाप का परिणमन और मोक्ष दशा के कारणभूत सम्यग्दर्शन आदि वीतरागीपर्याय का परिणमन दोनों ही शुद्धद्रव्य में नहीं हैं। तथा द्रव्यदृष्टि भी इस परिणमन को स्वीकार नहीं करती है।

शुद्धद्रव्यार्थिकनय का विषय ध्रुवपदार्थ है, परिणमन अथवा उत्पाद-व्यय व्यवहारनय का अथवा अशुद्ध निश्चयनय का विषय है। प्रत्येक पदार्थ में तीनों अंश एक साथ हैं—जैसे

नयी पर्याय का उत्पाद, पुरानी पर्याय का व्यय और ध्रुव—सदृशपने कायम रहना। इसप्रकार 'उत्पाद-व्यय-ध्रौव्ययुक्तं सत्'—यह आगम वाक्य कहा गया है।

उत्पाद-व्यय तो परिणमनरूप है, बदलता है, एकरूप नहीं रहता; इसलिये व्यवहारनय अथवा अशुद्धद्रव्यार्थिकनय का विषय है।

शुद्धद्रव्यार्थिकनय स्वयं श्रुतज्ञान की पर्याय है और वह उत्पाद-व्यय धर्मरूप पर्याय है, फिर भी उसका विषय ध्रुव अर्थात् शुद्धस्वभाव है। इसप्रकार शुद्धस्वभाव को जाननेवाले जीव उत्पाद-व्यय को अशुद्धनिश्चयनय से जान लेते हैं; उनका ज्ञान यथार्थ है। तथा 'मैं सदा शुद्धस्वभावी हूँ, एक हूँ'—इत्यादि का भान हुए बिना निश्चयनय का ज्ञान तो सच्चा होता ही नहीं, व्यवहार-पर्याय का ज्ञान भी सच्चा नहीं होता है।

कोई पूछता है कि सभी जीव सिद्धसमान हैं—ऐसा कहना चाहिये न?

समाधानः- सभी जीव सिद्धसमान हैं, यह बात बिलकुल ठीक है, द्रव्यार्थिकनय की अपेक्षा अज्ञानी भी सिद्धसमान है-ऐसा ज्ञान हो जाने पर भी अज्ञानी को इस तथ्य का सही भावभासन नहीं होता, ख्याल नहीं आता। सम्यक् श्रुतज्ञानी के ही नय होते हैं, अतः वे ही यथार्थतः यह जानते हैं कि अज्ञानी और ज्ञानी सभी सिद्धसमान हैं।

शुद्धद्रव्य पर दृष्टि हुए बिना रागपर्याय अथवा निमित्त का यथार्थ ज्ञान नहीं हो सकता है। यही कारण है कि शुद्धद्रव्यार्थिकनय की बात पहले कही है। जिसका ज्ञान हो जाने पर पर्याय आदि का ज्ञान अशुद्धनय से कराते हैं।

शुद्धद्रव्य कैसा है? अब यह ज्ञान कराते हैं। शुद्ध आत्मद्रव्य जैसे सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र आदि पर्याय का कर्ता नहीं है, वैसे ही पुण्य-पाप भावों का तथा घट-पट आदि जड़-पदार्थों का कर्ता नहीं है। एक रजकण भी आत्मा यहाँ से वहाँ नहीं करता।

जिसप्रकार राग वर्तमान पर्याय में होता है, वस्तु में नहीं; उसीप्रकार सम्यग्दर्शन पर्याय भी वस्तुस्वभाव में नहीं होती, वर्तमान पर्याय में ही होती है। इसप्रकार ध्रुव पदार्थ का ज्ञान जिनको होता है, उस जीव को रागादि का यथार्थ ज्ञान होता है।

अशुद्धनिश्चयनय से शुभ तथा अशुभ उपयोग से परिणत होनेवाला आत्मा पुण्य-पाप परिणामों का कर्ता और हर्ष-विषाद आदि भावों का भोक्ता है। दया, दान आदि के परिणाम और हर्ष, शोक, रति, अरति आदि के परिणाम भी जीव की पर्याय में ही होते हैं, अतः

अशुद्धनिश्चयनय आदि सभी जाननेयोग्य हैं। परंतु कब जाननेयोग्य हैं, यह भी ध्यान रखना चाहिए कि जब यह जान लिया जाये कि ये परिणाम शुद्धद्रव्य में नहीं है, तब ही इस विस्तार में जाना चाहिए।

इस रीति से सच्ची समझपूर्वक ज्ञान करना चाहिए। पर अज्ञानी को सच्ची समझ की महिमा आती ही नहीं; वह तो बिना समझे ही प्रतिमा और मुनिपना आदि धारण कर लेता है, पर यह सब सच्ची समझ बिना व्यर्थ है, समझकर ही यह सब धारण करना चाहिए। पुण्य-पापरूपी भाव अंशमात्र भी जीवतत्त्व अर्थात् शुद्ध आत्मा में नहीं हैं। यह दृष्टि हुए बिना पुण्य-पाप का व्यवहार भी जाननेयोग्य नहीं है अर्थात् लाभदायक नहीं है।

पुण्य-पाप का परिणाम जीव में कर्म के कारण होता है—इस मान्यतावाले को व्यवहार का भी ज्ञान नहीं है। दया, दान आदि विकारी परिणाम हैं—यह अशुद्धता स्वयं जीव का परिणमन है और अशुद्धनिश्चयनय से पुण्य-पाप के परिणामों का कर्ता आत्मा है।

कर्म का ऐसा उदय है कि हमें विकार करने ही पड़ते हैं, ऐसा अज्ञानी कहता है। पर्यायस्वभाव की खबर जिसे नहीं, उसे द्रव्यस्वभाव और स्वतंत्रता की खबर कैसे होगी? अपने शुभाशुभभावों का कर्ता जीव स्वयं है, कर्म राग-द्वेष नहीं कराते। जीव हर्ष और शोक का भोक्ता है, जड़ का नहीं। अज्ञानी जीवों की यह मान्यता अज्ञान है कि देह का दंड देह भोगे और पूर्वकृत कर्म भोगे बिना नहीं छूटते हैं। कर्म, शरीर आदि जड़ हैं, उन्हें आत्मा कैसे भोग सकता है? वह तो स्वयं में उत्पन्न हर्ष-शोक आदि को भोगता है, कर्म के कारण बाह्य पदार्थों को नहीं भोगता।

जीव अशुद्धद्रव्यार्थिकनय से राग-द्वेष भावों का कर्ता है; शुद्धनिश्चयनय से नहीं—ऐसा प्रामाणिक ज्ञान करना चाहिए। [क्रमशः]

पंडित ज्ञानचंदजी द्वारा धर्मप्रभावना

कानपुर (उ०प्र०) - श्री दिगम्बर जैन स्वाध्याय मंडल कानपुर के तत्त्वावधान में बड़ा जैन मंदिर जनरलगंज में दिनांक १५-११-८० से २३-११-८० तक बड़ी धूमधाम से श्री सिद्धचक्र मंडल विधान सानंद संपन्न हुआ। इस विधान में वाणीभूषण पंडित ज्ञानचंदजी विदिशा के प्रतिदिन विधान की जयमाल व छहढाला पर अभूतपूर्व प्रवचन चलते थे। प्रतिष्ठा का कार्य श्री पंडित बाबूलालजी अशोकनगर व पंडित बच्चूलालजी शास्त्री ने संपन्न कराया। पंडित लालचंदजी व उनके साथ युवा फैडरेशन के १५ बालकों द्वारा संगीत व भक्ति के साथ विधान कराया गया।

इस अवसर पर कानपुर समाज से कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन तीर्थ सुरक्षा ट्रस्ट को ७१,५२७ रुपये के वचन प्राप्त हुये। उनमें से प्रथम किस्त के रूप में १२,०४१ रुपये नगद प्राप्त हुए। एक हजार के ऊपर का सत्साहित्य बिका।

विधान से पूर्व दिनांक १४-११ को जनमंगल महाकलश की विशाल सभा पंडित ज्ञानचंदजी विदिशा की अध्यक्षता में संपन्न हुई तथा उनका भगवान बाहुबली पर मार्मिक प्रवचन हुआ।

युवा फैडरेशन उज्जैन के बालकों द्वारा अकलंक-निकलंक नाटक खेला गया।

— संतोषकुमार सर्राफ

सूचनाएँ

(१) श्री वीतराग-विज्ञान विद्यापीठ परीक्षा बोर्ड की परीक्षाएँ गुरुवार, शुक्रवार, शनिवार दिनांक २९, ३० व ३१ जनवरी १९८१ को होंगी।

केन्द्राध्यक्ष महोदय नोट कर लें। श्री बाहुबली महामस्तकाभिषेक महोत्सव के कारण परीक्षा की तिथियों में किसी प्रकार परिवर्तन नहीं हो सकेगा। इसलिए फार्म भेजने में अवश्य शीघ्रता करें।

(२) नि:शुल्क दी जानेवाली डॉ० हुकमचन्दजी भारिल्ल की लोकप्रिय कृति 'क्रमबद्धपर्याय' नामक पुस्तक दिनांक २२-११-८० तक प्राप्त पत्रों के अनुसार साधारण बुकपोस्ट से भेजी जा चुकी है। इसके बाद प्राप्त होनेवाले पत्रों के अनुसार क्रमश: भेजी जायेगी। इस संबंध में पत्र-व्यवहार करने का कष्ट न करें।

— हेमचंद्र जैन 'चेतन'

टोडरमल स्मारक भवन, ए-४, बापूनगर, जयपुर-३०२००४

वाराणसी (उ.प्र.) - स्याद्वाद महाविद्यालय के अध्यापकों, छात्रों, स्थानीय विद्वानों एवं समाज की शोक-सभा श्री जिनेन्द्रजी वर्णी की अध्यक्षता में हुई।

सिद्धांताचार्य पंडित कैलाशचंदजी शास्त्री ने श्रद्धाजंलि समर्पित करते हुए कहा कि- ''स्वामीजी की प्रवचनशैली निश्चयधर्म की थी। अब अध्यात्म की चर्चा सर्वसाधारण की चर्चा हो गई है, यह स्वामीजी की देन है।''

सिद्धांताचार्य पंडित फूलचंदजी ने कहा कि - ''स्वामीजी जैनधर्म के मर्म की बात कहते थे। समयसार पर उनका प्रवचन गहरा होता था।''

पंडित दरबारीलालजी कोठिया ने कहा कि - ''कलिकाल में स्वामीजी ने अध्यात्म का प्रकाश दिया है। उन्होंने समयसार का हृदय जाना था। मैंने उनका निश्चय-व्यवहार सुना है। व्यवहार तो उपेक्षणीय है ही।''

श्री जिनेन्द्रजी वर्णी ने कहा कि - ''मेरी स्वामीजी से भेंट ५४-५५ में हुई, जब मैं घर से बिना कहे उनके पास चला गया था। स्वामीजी ने जैनदर्शन का अंतरंग सामने रख दिया है। इंद्रभूति गौतम की भाँति घर से कोई विरोध लेकर उनके पास जाता था तो स्वामीजी के पास जाकर विरोध दूर हो जाता था। वे चले नहीं गये हैं, किंतु वे अपना प्रकाश छोड़ गये हैं।''

अंत में निम्न शोक-प्रस्ताव के अनुसार सभी ने दो मिनट मौन रखकर स्वामीजी के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित की:—

''श्री स्याद्वाद महाविद्यालय के अध्यापकों, छात्रों, स्थानीय विद्वानों एवं समाज की यह सभा श्री कानजीस्वामी के असामयिक निधन पर अपना गहरा शोक व्यक्त करती है। स्वामीजी ने अपने जीवनकाल में भगवत् कुन्दकुन्दाचार्य के समयसारगत अध्यात्म द्वारा जो प्रचार-प्रसार किया वह अभूतपूर्व है। उन्होंने स्थानकवासी संप्रदाय के पूज्य गुरु होते हुए भी उस संप्रदाय को त्यागकर दिगम्बर जैन मार्ग को अपनाया और समस्त सौराष्ट्र में दिगम्बर जैन मंदिरों की स्थापना के साथ दिगम्बर जैनधर्म का प्रचार करके जैन समाज में अध्यात्म के प्रति अद्वितीय जागृति की। हम उनके प्रति श्रद्धा व्यक्त करते हुए अपनी श्रद्धांजलि समर्पित करते हैं।'' **— नेमीचंद जैन, प्राचार्य**

सागर (म.प्र.) - पूज्य आध्यात्मिक संत श्री कानजीस्वामी के देहावसान का समाचार सुनकर समस्त दिगम्बर जैन समाज हतप्रभ रह गया। दिनांक २९ और ३० नवंबर के दिन सभी

व्यापारिक प्रतिष्ठान बंद रहे। ३० नवंबर को प्रात: ८ बजे संपूर्ण जैन समाज का एक मौन शोक-जुलूस कटरा मंदिरजी से प्रारंभ होकर मोराजी भवन गया, वहाँ प्रार्थना-सभा आयोजित की।

रात्रि में विशाल शोक-सभा स्थानीय मुमुक्षु मंडल के तत्त्वावधान में आयोजित की गई। जिनमें पंडित मुन्नालालजी वर्णी, पंडित पन्नालालजी साहित्याचार्य, श्री कपूरचंदजी समैया, सेठ डालचंदजी, डॉ० जीवनलालजी, श्री मन्नूलालजी एडवोकेट, पंडित निर्मलकुमारजी, श्री माखनलालजी बंडी, श्रीमती चंदनबाई तथा कु० कल्पना ने विभिन्न संस्थाओं की ओर से पूज्य गुरुदेव के जीवन-प्रसंगों और आध्यात्मिक अमृत-प्रवाह पर प्रकाश डाला व अपनी भावभीनी श्रद्धांजलियाँ अर्पित कीं।

— कोमलचंद जैन

कोटा (राज०) - जैन समाज में युगांतकारी चेतना के सूत्रधार आध्यात्मिक सत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के आकस्मिक निधन से संपूर्ण जैन समाज में गहरा शोक छा गया। दिनांक २९-११-८० को जैन संस्थाऐं एवं दुकानें बंद कर दी गईं। रात्रि में जैन औषधालय के प्रांगण में विभिन्न संस्थाओं के संयुक्त तत्त्वावधान में शोक-सभा का आयोजन किया गया। शोकनिमग्न जनसमुदाय से भरे प्रांगण में सभा की अध्यक्षता श्री जम्बूकुमारजी ने की।

दार्शनिक विद्वान श्री 'युगलजी' ने स्वामीजी के निधन को अपूरणीय क्षति बताते हुए कहा कि - ''पूज्य स्वामीजी ने प्राणों से भी अधिक सत्य को महत्त्व दिया था। उनका व्यक्तित्व स्वयं में एक दिशा है। विगत दो हजार वर्ष में जो धर्मप्रभावना नहीं हुई वह आज संभव हो सकी है।''

जिला कांग्रेस आई के अध्यक्ष श्री अनूपचंदजी, युवा फैडरेशन के मंत्री श्री विनोदजी, जैन, बघेरवाल संघ के महामंत्री श्री उत्सवचंदजी बगड़ा, वीर संघ के मंत्री श्री प्रतापचंदजी रांवका, वीर युवा मंडल के मंत्री श्री महावीरप्रसादजी जैन, अग्रवाल नवयुवक संघ मंडल के मंत्री श्री प्रेमचंदजी अग्रवाल, सन्मतिशाला के प्रधानाध्यापक श्री सूरजमलजी जैन, वीर वनिता संघ की प्रतिनिधि वैद्य कमलाबाई, पूजा प्रचार समिति के प्रतिनिधि श्री उत्तमचंदजी निरखी, वैद्य कपूरचंदजी एवं श्री माणिकचंदजी पालीवाल आदि ने पूज्य स्वामीजी के निधन पर गहरी संवेदना एवं शोक प्रकट करते हुए विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित की।

सभाध्यक्ष श्री जम्बूकुमारजी जैन ने शोक प्रकट करते हुए कहा कि ''तत्त्वज्ञान का प्रकाश करनेवाला सूर्य अस्त हो गया है।'' श्री कानजीस्वामी द्वारा विदेशों में किये गये धर्म प्रचार को महान उपलब्धि बताते हुए उन्होंने अश्रुपूरित नेत्रों से श्रद्धांजलि अर्पित की। अंत में २ मिनिट के मौन के साथ सभा विसर्जित की गई।

— राजेश सोगानी

भोपाल (म०प्र०) - दिनांक २९-११-८० को स्थानीय तारण-तरण चैत्यालय मंगलवारा में रात्रि ९ बजे एक शांति-सभा का आयोजन किया गया। पंडित रोशनलालजी गोयल ने पूज्य स्वामीजी के प्रति अपने उद्‌गार व्यक्त करते हुए कहा कि-''लग रहा है कि दोपहर में संध्या हो गई है। आत्मज्ञान की गहराइयों को प्रत्येक आत्मा को नापने की सामर्थ्य प्रदान करनेवाले अध्यात्म युगपुरुष ने हमसे विदा ले ली है। हमारी सबसे उत्कृष्ट श्रद्धांजलि तो यह होगी हम सब जैन (दिगम्बर, श्वेताम्बर, स्थानकवासी, तेरापंथी, तारणपंथी, बीसपंथी) मिलकर अध्यात्म एकतादिवस के रूप में मानें व मनावें।'' श्री कैलाशचंदजी ने कहा - ''पूज्य स्वामीजी में आत्मा में डूबने की जो शक्ति थी वह ऐसी शक्ति थी जो तीर्थंकर बनाती है।' पंडित उदयचंदजी ने कहा - ''पूज्य कानजीस्वामी हमारे लिए एक अवतार पुरुष थे, जिन्होंने तारणस्वामी के अध्यात्म मार्ग को जन-जन तक पहुँचाया और धर्म, सम्प्रदाय, जाति के भेदों से हटकर सुलभ सहज मार्ग दिखाया।'' अंत में सभी ने नौ बार णमोकार मंत्रोच्चारण कर शांति पाठ किया। **— शिखरचंद**

उज्जैन (म०प्र०) - सुप्रसिद्ध आध्यात्मिक संत पूज्य कानजीस्वामी के समाधिपूर्वक महाप्रयाण के समाचारों ने स्थानीय जैन समाज के मानस को एक बार स्तब्ध कर दिया। समाचार मिलते ही समस्त जैन शिक्षण संस्थाऐं तथा होलसेल क्लॉथ मार्केट बंद कर दिया गया। रात्रि में समस्त जैन समाज की ओर से एक शोक-सभा आयोजित की गई।

शोक-सभा में श्री हुकमचंदजी पांड्या, श्री नंदलालजी कासलीवाल एडवोकेट, श्री प्रकाशचंदजी झांझरी आदि ने श्रद्धांजलियाँ अर्पित कीं। सुप्रसिद्ध अभिभाषक श्री चांदमलजी मेहता ने श्वेताम्बर समाज की ओर से श्रद्धांजलि अर्पित की।

श्री सत्यंधरकुमारजी सेठी ने पूज्य स्वामी के जीवन के क्रांतिकारी परिवर्तन पर प्रकाश डालते हुए बताया कि - ''वे एक महान आध्यात्मिक संत थे, जिनके क्रांतिकारी विचारों ने समाज के जीवन में नया परिवर्तन दिया और दिगम्बरत्व के प्रचार के लिए वे एक प्रकाश-स्तम्भ बने। उनका अभाव हमें शताब्दियों तक खटकता रहेगा। ऐसे संत के चरणों में हम श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए अपने आपको धन्य मानते हैं।''

इसके पश्चात् सभापति महोदय की ओर से एक प्रस्ताव पारित किया गया तथा नवकार मंत्र के जाप के साथ स्वर्गस्थ आत्मा के प्रति शांति की कामना की गई।

मेरठ (उ०प्र०) - दिनांक ३०-११-८० को स्थानीय पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मंदिर में जैन समाज की ओर से एक शोक-सभा हुई, जिसमें समाज के कई व्यक्तियों ने पूज्य कानजीस्वामी के

आकस्मिक निधन पर अपने-अपने श्रद्धासुमन अर्पित किये। अंत में ब्रह्मचारी बहन कु० कौशल ने युगपुरुष पूज्य कानजीस्वामी के जीवन पर प्रकाश डाला। अंत में निम्न शोक-प्रस्ताव पारित किया गया - ''जैन समाज मेरठ की यह आम सभा बालब्रह्मचारिणी कु० कौशल के सान्निध्य में युगपुरुष महान आध्यात्मिक संत श्रद्धेय कानजीस्वामी के आकस्मिक निधन पर हार्दिक शोक प्रगट करती है। स्वामीजी के इस निधन से समाज को ही नहीं, वरन् पूरे देश को महान आघात पहुँचा है। आपने आध्यात्मिक क्षेत्र में जो महान् क्रांति का सूत्रपात किया है, वह युग-युग तक समस्त विश्व को प्रेरित करता रहेगा एवं वीतरागमार्ग की परंपरा को आपने अक्षुण्य एवं चिरस्थाई करने में जो महान् योगदान दिया है, वह चिरस्मरणीय रहेगा। मेरठ जैन समाज उनके प्रति हार्दिक श्रद्धांजलियाँ अर्पित करती है।''

— ओमप्रकाश जैन

दिल्ली - अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन परिषद के कार्यकर्ताओं की एक बैठक परिषद के कार्याध्यक्ष श्री अक्षयकुमार जैन, भू० पू० सम्पादक नवभारत टाइम्स की अध्यक्षता में १ दिसम्बर, १९८० को हुई। उपस्थित सभी कार्यकर्ताओं ने आध्यात्मिक संत कानजीस्वामी के स्वर्गवास पर गहरा दु:ख प्रगट किया। कानजीस्वामी ने आध्यात्मिक विचारधारा को जिसप्रकार जन-जन तक पहुँचाया, जैन समाज सदैव उनकी ऋणी रहेगी। वे समय व अनुशासन के प्रेरणादायक थे। वे जो कहते थे, उस पर अटल रहते थे। उनके चले जाने से आध्यात्मिक प्रेमियों को बड़ी क्षति पहुँची है, जिसका पूरा होना संभव नहीं है। परिषद-परिवार उनके प्रति अपने श्रद्धा-सुमन अर्पित करता है व अध्यात्म-प्रेमियों को उनके वियोग से हुए दु:ख के लिए संवेदना करने की प्रार्थना करता है। **— मंत्री**

शाहदरा (दिल्ली) - युवा फैडरेशन की स्थानीय शाखा के तत्त्वावधान में ४-१२-१९८० को शोक-सभा का आयोजन किया गया।

सन्मति संदेश के संपादक पंडित प्रकाशचंदजी 'हितैषी' ने लगभग १ घंटे तक पूज्य स्वामीजी के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालते हुए अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की। समाज के अनेक अन्य गणमान्य व्यक्तियों ने भी पूज्य स्वामीजी के प्रति भावभीनी श्रद्धांजलियाँ अर्पित कीं। अंत में संथा के मंत्री श्री जयप्रकाशजी ने शोक-प्रस्ताव पढ़कर सुनाया एवं स्वामीजी की स्तुति के उपरांत सभा विसर्जित की गई।

इंदौर (म.प्र.) - स्थानीय समस्त दिगम्बर जैन समाज की बैठक दिनांक ३०-११-८० को श्री मिश्रीलालजी गंगवाल, भू० पू० मुख्यमंत्री मध्य भारत की अध्यक्षता में संपन्न हुई। श्री मिश्रीलालजी गंगवाल, श्री बाबूलालजी पाटोदी, श्री कैलाशचंदजी चौधरी, श्री राजबहादुरसिंहजी कासलीवाल, श्रीमती चंद्रप्रभा मोदी, पंडित रतनलालजी शास्त्री, पंडित रमेशचंदजी एवं श्री

प्रकाशचंदजी पाण्ड्या ने समाज पर उनके अनेकानेक उपकारों का स्मरण करते हुए कहा कि वे सारे जीवन सत्य की खोज में लगे रहे। सारे भारत एवं विशेषकर सौराष्ट्र-गुजरात में अनेक दिगम्बर जैन मंदिरों के निर्माण, दिगम्बर जैन धर्मावलम्बियों की संख्या में वृद्धि, सोनगढ़ के माध्यम से सस्ते-सुंदर-ज्ञानवर्द्धक साहित्य के प्रकाशन, वीतरागता के मार्ग एवं समयसार को जन-जन तक पहुँचाने के महान कार्य के साथ उन्होंने जन-जन के मन में स्वाध्याय-प्रवृत्ति की जो प्रेरणा एवं रुचि जागृत की है-उसी के फलस्वरूप आज हजारों विद्वान उपलब्ध हुए हैं। निश्चित ही वर्तमान शताब्दी में समाज पर उनका यह एक महान उपकार है। उन्हें हम हमारी सच्ची श्रद्धांजलि इसी रूप में अर्पित कर सकते हैं कि हम स्वाध्याय-प्रवृत्ति को अपने जीवन में अधिक से अधिक विकसित करते हुए उनके बताये हुए तत्त्वज्ञान एवं वीतरागता के मार्ग की ओर अग्रसर हों। **— कैलाशचंद चौधरी**

जबलपुर (म०प्र०) - स्थानीय जैन समाज द्वारा जवाहरगंज जैन मंदिर में ऐलक सुमतिसागरजी के सान्निध्य में शोक-सभा की गई जिसमें पंडित ज्ञानचंदजी शास्त्री, बाबू फूलचंदजी, श्री शिखरचंदजी, विद्यादेवी काव्यतीर्थ आदि अनेक महानुभावों ने पूज्य स्वामीजी के महान व्यक्तित्व आदि के संबंध में प्रकाश डालते हुए आध्यात्मिक क्रांति-प्रणेता के रूप में उनका पुण्य-स्मरण किया। अंत में ऐलक सुमतिसागरजी महाराज ने, उनकी आत्मा में धर्म-रुचि सतत् बढ़ती रहे, ऐसी सद्भावना प्रगट की। अंत में सभी ने भावभीनी श्रद्धांजलि समर्पित की।

— दुलीचंद कौशल

बड़ौत (उ०प्र०) - पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के आकस्मिक निधन पर आयोजित शोक-सभा में निम्न प्रस्ताव पारित किया गया —

''दिगम्बर जैन स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट, बड़ौत की यह आमसभा परमपूज्य कृपालु गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के आकस्मिक निधन पर हार्दिक शोक व्यक्त करती है। आपका विरह समस्त समाज को खटक रहा है। इस अनमोल रत्न की पूर्ति होना कठिन नजर आता है। वास्तव में गुरुदेव के विरह से मानो सूर्य ही अस्त हो गया है। हम सभी गुरुदेव के निधन से अत्यंत दु:खी हैं।''

— रघुवीरसिंह जैन, मंत्री

ग्वालियर (म०प्र०) - स्थानीय दिगम्बर जैन बड़ामंदिर सर्राफा में शोक-सभा का आयोजन किया गया, जिसकी अध्यक्षता श्री मानिकचंदजी गंगवाल एडवोकेट ने की। पंडित धन्नालालजी, पंडित सागरचंदजी बड़जात्या, पंडित धरमचंदजी शास्त्री, पंडित कपूरचंदजी बरैया, श्री मिश्रीलालजी पाटनी आदि ने पूज्य स्वामीजी के व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व आदि पर प्रकाश डालते हुए श्रद्धांजलि अर्पित की। निम्न शोक-प्रस्ताव पारित किया गया तथा मौनरूप से णमोकारमंत्र बोलते हुए सभा विसर्जित की गई।

''आध्यात्मिक संत श्री कानजीस्वामी का देहावसान हो जाने से जैन समाज की महान विभूति की क्षति हुई है, जिससे अत्यंत दु:ख हुआ है। लश्कर दिगम्बर जैन समाज उनके प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करती हुई चिंतवन करती है कि ऐसी महान विभूति की आत्मा को सद्गति प्राप्त हुई होगी।''

— मिश्रीलाल पाटनी

प्रतापगढ़ (राज०) - स्थानीय मुमुक्षु मंडल की ओर से ३०-११-८० को शोक-सभा का आयोजन किया गया। अनेक लोगों ने श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए पूज्य स्वामीजी के गुणों का स्मरण किया और कहा—जैन दर्शन का एक अद्वितीय विद्वान संसार से उठ गया है। आपकी लिपिबद्ध हुई युगवाणी भविष्य में भी अनेकानेक प्राणियों का हित करती रहेगी।

द्रोणगिरि (म०प्र०) - परमपूज्य कानजीस्वामी के देहावसान होने से द्रोणप्रांतीय नवयुवक सेवा संघ सच्चे मोक्षमार्ग के पथ-प्रदर्शक की क्षति होने से शोक से विह्वल होकर शोक-प्रस्ताव पारित करता है।

— सुरेन्द्र सिंघई

ऐत्मादपुर (उ०प्र०) - १ दिसम्बर, १९८० को दिगम्बर जैन पंचायती मंदिर में वैराग्य-सभा का आयोजन किया गया। विभिन्न वक्ताओं ने पूज्य स्वामीजी द्वारा दिगम्बर जैनधर्म के प्रचार-प्रसार पर प्रकाश डाला।

— अभयकुमार जैन

पिड़ावा (राज०) - दिनांक ३०-११-८० को पूज्य कानजीस्वामी के वियोग में शोक-सभा का आयोजन किया गया। शोकस्वरूप संपूर्ण बाजार बंद रहा। अनेक लोगों ने पूज्य स्वामीजी के प्रति भावभीनी श्रद्धांजलि व्यक्त की।

— नेमीचंद जैन

दमोह (म०प्र) -जैन संस्कृति के महान उद्घोषक, परमपूज्य सद्गुरुदेव श्री कानजीस्वामी के निधन पर 'श्री भागचंद इटोरया सार्वजनिक न्यास' के समस्त न्यासीगण स्तब्ध रह गये तथा उन्हें हार्दिक दु:ख पहुँचा। श्री स्वामीजी श्रमण संस्कृति के महान सपूत थे। उन्होंने सदियों के बाद जैन संस्कृति में एक क्रांतिकारी परिवर्तन कर जैन आध्यात्मिक चेतना को सिर्फ देश में ही नहीं, वरन् संपूर्ण विश्व में प्रसारित किया। पूज्य स्वामीजी एक युगदृष्टा के रूप में अमर-स्तंभ बने रहकर हमें हमेशा रोशनी देते रहेंगे। सभी न्यासीगण समाज की इस अपूरणीय क्षति पर शोकसंतप्त हृदय से स्वर्गस्थ आत्मा के लिए मंगलकामना करते हुए अपनी हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं।

— जयकुमार इटोरया

रतलाम (म०प्र०) - श्री समरथमलजी अग्रवाल की अध्यक्षता में शोकसभा का आयोजन किया गया। खबर लगते ही समाज ने अपनी दुकानें एवं कारोबार बंद कर दिया तथा अपनी

श्रद्धांजलियों में पूज्य स्वामीजी के जीवन पर प्रकाश डालते हुए उनके बताये मार्ग पर चलकर सम्यग्दर्शन प्राप्त करने की भावना व्यक्त की। **— मोहनलाल छाबड़ा**

मंडला (म०प्र०) - पूज्य कानजीस्वामी के स्वर्गवास के समाचार सुनकर स्थानीय जैन समाज हतप्रभ हो गई। दिनांक ३०-११-८० को रात्रि में शोक-सभा का आयोजन किया गया। डॉ० एन. के. जैन, आई. के. गोयल तथा पंडित ज्ञानचंदजी शास्त्री आदि ने स्वामीजी के जीवनदर्शन तथा दिगम्बर जैनधर्म की उनके द्वारा हुई प्रभावना पर प्रकाश डाला। अन्त में शोक-प्रस्ताव पारित किया गया तथा णमोकार मंत्र के पठन एवं मौन के बाद सभा विसर्जित हुई। सभा का संचालन श्री तेजराज जैन, प्राचार्य, जवाहरलाल नेहरू उच्च० मा० शाला, महाराजपुर ने किया। **— इंद्रकुमार गोयल**

बड़ा मलहरा (म०प्र०) - आध्यात्मिक सतपुरुष पूज्य श्री कानजीस्वामी के निधन पर एक शोक-सभा का आयोजन किया गया, जिसमें प्रबुद्ध विद्वानों ने एवं समस्त जैन समाज ने स्वामीजी के चरणों में अपनी-अपनी श्रद्धांजलियाँ समर्पित कीं एवं गहन शोक प्रगट किया।

अंत में सामूहिक रूप से २ मिनिट का मौन रखकर णमोकार मंत्र का स्मरण करते हुए स्वामीजी के चरणों में श्रद्धांजलि अर्पित की। **— रतनचंद जैन**

इटारसी (म०प्र०) - स्थानीय पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मंदिर में रात्रि को शोक-सभा हुई जिसमें उपस्थित पुरुषों एवं महिलाओं ने पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित की एवं शोक-प्रस्ताव पारित किया। **— राजधर जैन**

जयपुर की विभिन्न संस्थाओं द्वारा

राजस्थान जैन सभा

जयपुर (राज०) - दिनांक ३०-११-८० को राजस्थान जैन सभा के तत्त्वावधान में तेरापंथी दिगम्बर जैन बड़े मंदिर में श्री राजकुमारजी काला की अध्यक्षता में शोक-सभा हुई। जिसमें पंडित भंवरलालजी न्यायतीर्थ, पंडित बंशीधरजी शास्त्री, पंडित अनूपचंदजी न्यायतीर्थ, डॉ० कस्तूरचंदजी कासलीवाल, डॉ० ताराचंदजी बक्शी, पंडित संतोषकुमारजी झांझरी, श्री राजमलजी जैन, श्री रतनलालजी छाबड़ा, श्री विनयकुमारजी पापड़ीवाल, श्रीमती शशिप्रभाजी, श्री बलभद्रकुमारजी जैन, श्री केवलचंदजी ठोलिया आदि ने पूज्य कानजीस्वामी के गुणों एवं सेवाओं पर विस्तृत प्रकाश डालते हुए उन्हें हार्दिक श्रद्धांजलियाँ अर्पित कीं।

महावीर इंटरनेशनल

जयपुर (राज०) - महावीर इंटरनेशनल का यह प्रथम वार्षिक सम्मेलन अध्यात्म जगत के महान् संत श्री कानजीस्वामी के निधन पर शोक से अभिभूत होकर उनके प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उनकी पावन आत्मा के लिए परमशांति-लाभ की कामना करता है और चाहता है कि उनकी प्रेरणा से जो लोक-जीवन में आध्यात्मिक क्रांति हुई है, वह निरंतर आगे बढ़े, जिससे संसार के दु:खों से त्रस्त मानव, जीवन के सही लक्ष्य को प्राप्त करता रह सके। **— तेजकरण डंडिया**

भारत जैन महामंडल

जयपुर (राज०) - दिनांक २९-११-७० को भारत जैन महामंडल (राज०) के तत्त्वावधान में पूज्य कानजीस्वामी के निधन पर शोक-सभा का आयोजन श्री चंदनमलजी वैद (भू०पू० वित्तमंत्री) की अध्यक्षता में किया गया। इसमें श्री कपूरचंदजी पाटनी (मंत्री, महावीरजी तीर्थक्षेत्र कमेटी), डॉ० ताराचंदजी बक्शी (संयोजक, अखिल विश्व जैन मिशन, जयपुर), श्री राजकुमारजी काला (अध्यक्ष, राजस्थान जैन सभा), श्री मोहनलालजी काला (उपाध्यक्ष, श्री महावीर विकलांग सहायता समिति), एवं अध्यक्ष महोदय ने श्री कानजीस्वामी के गुणों, कार्यों एवं सेवाओं पर प्रकाश डालते हुए उन्हें हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित की तथा उनके असामयिक निधन पर गहरा दु:ख प्रगट करते हुए शोक प्रस्ताव पास करके दिवंगत आत्मा की सद्गति एवं शांति के लिए प्रार्थना की।

अखिल भारतीय जैनयुवा फैडरेशन

जयपुर (राज०) - दिनांक २८-११-८० को पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के निधन का समाचार सुनते ही तत्काल कार्यकारिणी के जयपुर में उपस्थित सदस्यों की बैठक हुई जिसमें पूज्य स्वामीजी के आकस्मिक निधन पर निम्न शोक-प्रस्ताव पारित किया गया-

"अ० भा० जैनयुवा फैडरेशन की स्थापना के मूल प्रेरणास्रोत पूज्य गुरुदेव श्री कानजीस्वामी ही हैं, जिन्होंने दिगम्बर जैनागम का मर्म खोलकर लाखों प्राणियों को सच्ची दिशा दी है। उनके द्वारा प्रतिपादित तत्त्वज्ञान को समझना एवं उसका ही प्रचार-प्रसार करना संस्था का मूल उद्देश्य है। उनकी अमृतवाणी के जादू से आज हजारों युवकों के कदम भौतिक मार्ग से पीछे हटकर रत्नत्रय धर्म का स्वरूप समझने की ओर बढ़े ही थे कि अचानक जिनागम का रहस्य स्पष्ट करनेवाला आधार-स्तंभ चला गया। उनके निधन से समस्त युवा जगत अपने को असहाय अनुभव कर रहा है। उनकी वाणी में प्रतिपादित शुद्धात्मतत्त्व को समझने का तथा उसी के प्रचार-प्रसार का पुनीत संकल्प करते हुए युवा फैडरेशन उनके चरणों में अपने श्रद्धासुमन समर्पित करता है।"

पार्श्वनाथ नवयुवक मंडल

जयपुर (राज०) - पूज्य गुरुदेव के इस भौतिक युग में धर्माडंबरों से बचकर ही नहीं, बल्कि उन्हें निरर्थक बताकर धर्म के वास्तविक स्वरूप को समझाया है। उनका व्यक्तिव और कर्तृत्व सदा ही हमें सद्धर्म की प्राप्ति हेतु प्रेरणास्पद है। भविष्य में भी हम सभी प्रेरणा पाते रहें—इस भावना के साथ पार्श्वनाथ नवयुवक मंडल बापूनगर उनके चरणों में अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता है और यह संकल्प करता है कि सदा ही सच्चे देव, शास्त्र, गुरु में अपनी दृढ़ आस्था बनाये रखेगा।

अत्यावश्यक सूचना

पूज्य गुरुदेव श्री कानजीस्वामी के वियोग से उत्पन्न अवसाद को कम करने के उद्देश्य से सोनगढ़ में दिनांक २५-१२-८० से १-१-८१ तक विशाल सिद्धचक्र महोत्सव करने का निश्चय किया गया है। इस अवसर पर पंडित हिम्मतभाई शाह, ब्रह्मचारी चंदुभाई जोबालिया, पंडित लालचंदभाई, डॉ० हुकमचंदजी भारिल्ल एवं पंडित ज्ञानचंदजी आदि के प्रवचन सुनने तथा कक्षाओं का लाभ भी प्राप्त होगा। सिद्धचक्र मंडल विधान की जयमालाओं का मार्मिक अर्थ भी डॉ० भारिल्लजी की ओजपूर्ण वाणी में सुनने को मिलेगा।

इस अवसर पर प्रथम दिन, अंतिम दिन एवं २८ जनवरी को (गुरुदेवश्री की निधन की मासिक तिथि के दिन) विशाल रथयात्राऐं निकलेंगीं। भोजन और आवास की समुचित व्यवस्था की जावेगी।

श्री वीतराग-विज्ञान विद्यापीठ परीक्षा बोर्ड

श्री टोडरमल स्मारक भवन

ए-४, बापूनगर, जयपुर ३०२००४ (राजस्थान)

शीतकालीन परीक्षा-कार्यक्रम सन् १९८०-८१

दिन एवं दिनांक	नाम ग्रंथ
गुरुवार २९ जनवरी, १९८१	१. बालबोध पाठमाला भाग १ (बा० प्रथम खंड) मौखिक २. जैन बालपोथी भाग १ (मौखिक) ३. वीतराग-विज्ञान पाठमाला भाग १ (प्र० प्रथम खंड) ४. तत्त्वज्ञान पाठमाला भाग १ ५. छहढ़ाला (पूर्ण) ६. तत्त्वार्थसूत्र (मोक्षशास्त्र) पूर्वार्द्ध ७. मोक्षमार्गप्रकाशक (पूर्वार्द्ध) ८. जैन सिद्धांत प्रवेशिका (बरैयाजी) ९. विशारद द्वितीय खंड (प्रथम वर्ष)
शुक्रवार ३० जनवरी, १८१	१. बालबोध पाठमाला भाग २ (बा० द्वितीय खंड) मौखिक २. जैन बालपोथी भाग २ (मौखिक) ३. वीतराग-विज्ञान पाठमाला भाग २ (प्र० द्वितीय खंड) ४. तत्त्वज्ञान पाठमाला भाग २ ५. द्रव्यसंग्रह (पूर्ण) ६. तत्त्वार्थसूत्र (मोक्षशास्त्र) उत्तरार्द्ध ७. लघु जैन सिद्धांत प्रवेशिका (सोनगढ़) ८. मोक्षमार्गप्रकाशक (उत्तरार्द्ध) ९. विशारद प्रथम खंड (प्रथम वर्ष) १०. विशारद द्वितीय खंड (द्वितीय वर्ष)
शनिवार ३१ जनवरी, १९८१	१. बालबोध पाठमाला भाग ३ (बा० तृतीय खंड) मौखिक २. वीतराग-विज्ञान पाठमाला भाग ३ (प्र० तृतीय खंड) ३. रत्नकरंड श्रावकाचार (पूर्ण) ४. पुरुषार्थसिद्ध्युपाय (पूर्ण) ५. विशारद प्रथम खंड (द्वितीय वर्ष)

नोट - (1) सुविधानुसार परीक्षा का समय सुबह ९ बज से ५ बजे तक के बीच में कभी भी सैट किया जा सकता है।

(2) जहाँ एक से अधिक केंद्र हों, वे आपस में मिलकर समय निश्चित करें।

(3) यदि किन्हीं विषयों के छात्र आपस में टकराते हों तो परीक्षा सुविधानुसार दिन में दो बार ली जा सकती है।

स्व० पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी

जिनकी सौम्य मुस्कान सदैव हमारेअंतर्मन में प्रतिष्ठित रहेगी।

जन्म :
बैसाख सुदी २, वि०सं० १९४७

निधन :
मार्गशीर्ष कृष्ण, ७, वि०सं० २०३७

Registration. No. RJ-2712

Licence No.
P. P. 16-S.S.P. Jaipur City Dn.
Licensed to Post
Without Pre-Payment

If undelivered please return to :
प्रबन्ध-संपादक, आत्मधर्म
ए-४, टोडरमल स्मारक भवन, बापूनगर
जयपुर ३०२००४

स्व० पूज्य गुरुदेवश्री कानजी स्वामी के प्रति

समयसार द्रव्यानुयोग में रमते-रमते—
आप स्वयं प्रथमानुयोग बन गए हमारे।
नयचक्रों के सिद्धांतों में जमते-जमते—
आप स्वयं दृष्टांतों में छन गए हमारे॥

आप सरल थे, समयसार तो बहुत कठिन है।
उसको पढ़ने के पहले तो हमें आपको पढ़ना होगा॥
जीवन का इतिहास आपका चूंकि पुराणों से मिलता है—
इसीलिए तो हमें सरल से कठिन ओर अब बढ़ना होगा॥

आप स्वयं चरणानुयोग के युगनायक थे।
निर्ग्रंथों के, सद्ग्रंथों के, गणधर-से गायक थे॥
खरी कसौटी होती है करुणानुयोग की।
उसने सिद्ध किया लघुनंदन, चौथे के लायक थे॥

— फूलचंद 'पुष्पेन्दु', खुरई